आधी जनशक्ति अपंग न रहे

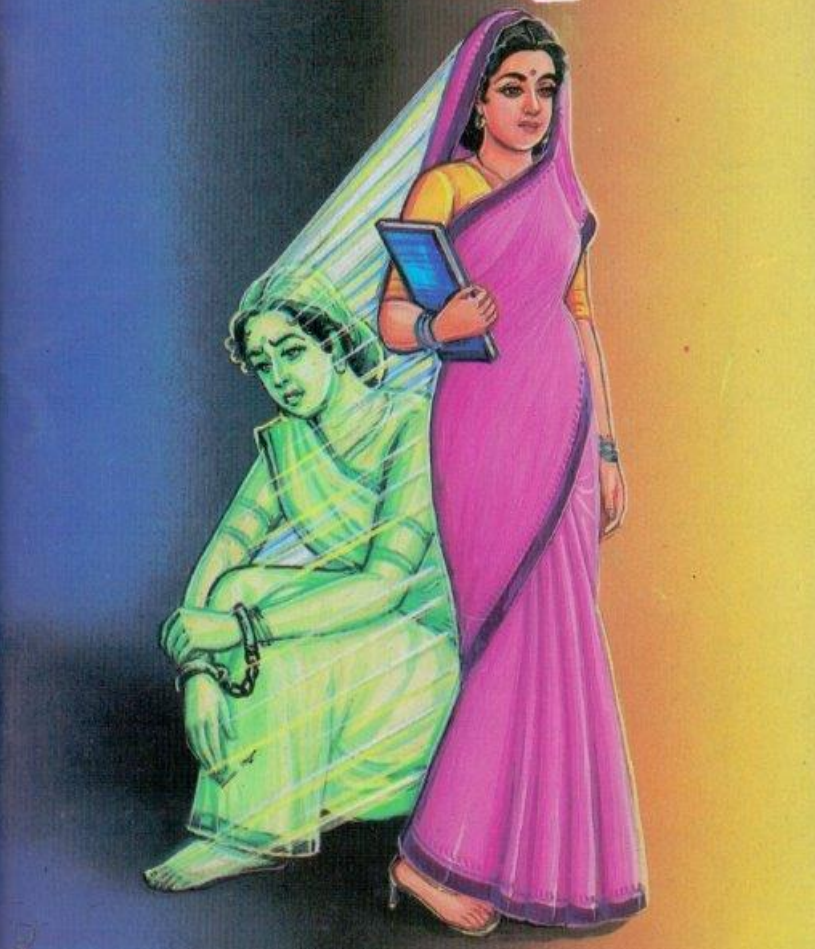

आधी जन शक्ति अपंग न रहे

लेखिका
भगवती देवी शर्मा

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

२०१०

मूल्य : ९.०० रुपये

१. राष्ट्र की आधी शक्ति क्या पंगु ही पड़ी रहेगी

२. यह दयनीय दुर्दशा कब तक ?

३. विषमता की यह विकृति अब समाप्त होनी चाहिए

४. नारी की वर्तमान स्थिति बदलनी ही होगी

''न्याय, औचित्य और स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले, मानवी आदर्श को मान्यता देने वाले, उदात्त लोगों की पंक्ति में हमें खड़े होना चाहिए और इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि नारी घर के उत्तरदायित्व को सम्हाले, पर उतने ही क्षेत्र मे कैद न रहे । अनुभव बढ़ाने, समाज का स्वरूप समझने के अवसर उसे मिलने चाहिए । इससे मानव जाति की आधी शक्ति की मूर्च्छित आत्मा को जगाने का पथ प्रशस्त होगा और समूची मानव जाति को इस प्रगतिशील कदम का लाभ मिलेगा ।''

राष्ट्र की आधी जनशक्ति क्या पंगु ही पड़ी रहेगी

जब हम नारी की दयनीय स्थिति पर विचार करते हैं तो हमें ऐसा लगता है कि आने वाला समय बड़ा संघर्ष का होगा । वर्तमान समय में नारी को किस तरह चहारदीवारी के अंदर रहना पड़ता है, वह तो भुक्तभोगी ही जानता है ।

भारत गांवों का देश है जहां की ८० प्रतिशत जनता देहातों में निवास करती है, जो नारी शिक्षा को बिल्कुल महत्व नहीं देते हैं । आजादी मिले लगभग चौथाई शताब्दी गुजर गयी परंतु आजादी की गंगा इनको छू भी नहीं सकी है । कारण कुछ भी हो नारी का पिछड़ापन, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, अशिक्षा आज भी समाज को कमजोर बना रही है ।

समाज का आधा अंग पंगु बना रहे तो उन्नति असंभव है । नारी को घूंघट में ही पैदा होना पड़ता है और घूंघट में ही मर जाना पड़ता है । इस विषमता को हम जब तक दूर नहीं करेंगे, समाज का पिछड़ापन हमेशा बना रहेगा ।

ऐसा नहीं है कि नारी हमेशा से इसी तरह पीड़ित रही है । भारत में नारियों का स्वर्णकाल रहा है और उनको सबसे अधिक सम्मान इसी में मिला है । वैदिक काल में तो नारी को नर से भी अधिक अधिकार प्राप्त थे ।

विवाह के संबंध में नारी न केवल स्वतंत्र ही थी बल्कि कन्या ही वर को चुना करती थी । आज की तरह कन्या अपने अभिभावकों की कोई ऐसी संपत्ति नहीं थी जिसको वे अपनी मर्जी से जिसे चाहे सौंप दें ।

स्वयंवर की प्रथा और गंधर्व विवाहों के उदाहरण इस बात के जीते जागते उदाहरण हैं कि कन्या अपनी रुचि के अनुसार वर चुनने के लिए सर्वथा स्वतंत्र थी । सीता, सावित्री, दमयंती, शकुंतला आदि अनेक नारियों

के उदाहरण इतिहास में पाए जाते हैं, जिन्होंने वर अपने आप स्वतंत्र इच्छा से चुने, और बाद में अभिभावकों ने स्वीकृति दी ।

इसका कारण यही था कि उस समय नारियों को शिक्षा तथा सामाजिकता की पूर्ण सुविधा होती थी कि अपना अच्छा-बुरा अपने आप कर सकें और जिम्मेदारी के साथ अपना जीवन साथी चुन सकें ।

निःसंदेह वह युग नारी के लिए स्वर्ण युग ही रहा है । जिसका परिणामतः उस समय माता की स्थिति के अनुसार उनकी संतानें भी धीर, वीर, त्यागी, दानी और विद्वान होकर देश का गौरव ऊंचा करती थीं ।

आज हमारे सामने कई समस्याएं मुंह फाड़े खड़ी हैं, राष्ट्रनेता उन्नति की बड़ी बड़ी योजनाएं बना रहे हैं और चाहते हैं कि समाज से नेक, ईमानदार और होनहार नागरिक आगे आएं, देश की बागडोर अपने हाथ में लें ।

नारी जो राष्ट्र की जननी और निर्मात्री है वह अंधेरे में भटक रही है । घर की चहारदीवारी में सर पटक पटक कर मर जाना ही उसके भाग्य में लिखा है । नारी को इस तरह कब तक छला जाएगा, उत्तर कहीं से भी नहीं मिलता ?

हम चाहते हैं अच्छी संतानें उत्पन्न हों पर यह तभी संभव है जब कि नारी को शिक्षित तथा पूर्ण स्वतंत्रता का मौका दिया जाए । कानून की दृष्टि से आज भी नारी को स्वतंत्र बताया जाता है परंतु समाज की नजर में वह एक दासी है, जिसका अपना न कोई अस्तित्व है और न कोई अधिकार ।

पुरुष वर्ग वर्षों से नारी पर अत्याचार करता रहा है, वह चाहे वेश्यागामी, शराबी, जुआरी रहे किंतु पत्नी यह मानकर सब सहन करती रहे कि पति परमेश्वर के समान है । वर्षों से यही पुराना अलाप अलापा जा रहा है ।

नारी ने जब जब भी आगे कदम बढ़ाने की कोशिश की तो परंपराओं रूपी जहर ने उन्हें हमेशा हमेशा के लिए काल के गाल में पहुंचा

दिया । कई रीत्ति रिवाज ऐसे हैं जो नारी की बौद्धिक क्षमता को बड़ी ठेस पहुंचाते हैं । उन्हें पिंजरे के पक्षी की तरह तड़फड़ाते हुए प्राण गंवा देने के लिए विवश किया जाता है ।

शिक्षा, सामाजिकता आदि में हिस्सा बंटाने में पुरुष ही आगे आता है नारी को अयोग्यता का चोला पहनाकर जड़ मूर्ति के समान एक ही जगह रखना अपनी शान समझता है । नारी का सारा जीवन ही इसी तरह निकल जाता है ।

यों कहने के लिए तो नारी के विकास के लिए अवसरों की कानूनी तथा औपचारिक व्यवस्था की गई है किंतु यथार्थ में उनका कोई उपयोग है नहीं । जब घर में उसका स्वामी बना हुआ पुरुष उसे अवकाश ही न देगा, उसका पढ़ना लिखना सहन नहीं करेगा तो नारी किस प्रकार से अवसरों का लाभ उठा सकती है । यह तो तभी संभव हो सकता है जब नर उनके प्रति उदार बने और न केवल अपना विकास करके ही संतुष्ट रहे वरन् नारी के लिए भी प्रगति के साधन जुटाए ।

लड़कियों को लड़कों की तरह ही पढ़ाने, लिखाने और योग्य बनाने में एक स्थायी रुचि को स्थान दिया जाए और मान लिया जाए कि लड़कों की तरह ही लड़कियों का विकास भी अनिवार्य एवं अपरिहार्य है ।

नारी के अपने ऐसे कोई पर पंख नहीं हैं जिनके आधार पर स्वयं ऊंची उठ सके । निम्न स्तर के परिवारों में नहीं उच्च स्थिति के घरों में भी नारियों को पुरुषों के संकेतों का यंत्र बनकर चलना पड़ता है । सुविधा होने पर भी वे न तो स्वेच्छा से पढ़ लिख सकती हैं और न सामाजिक पथ पर आगे बढ़ सकती हैं ।

रोटी, कपड़े से लेकर सुरक्षा तक के लिए पुरुष पर निर्भर रहना पड़ता है । उनका जीवन, उनकी सुख शांति, उनका भरण पोषण सब कुछ पुरुष वर्ग की प्रसन्नता का अनुगामी है । पुरुष प्रसन्न है तो वह रानी है । पुरुष नाराज है तो उसकी दशा दासी से भी गई गुजरी है ।

पति को स्वामी की पदवी छोड़ कर साथी का सा व्यवहार करना चाहिए । जब तक हमारी पत्नियां समान रूप से विकसित तथा अधिकारिणी

नहीं होंगी तब तक न तो हमारा परिवार और न समाज ठीक ठीक उन्नति कर सकता है । एक लंबे समय से अब तक गुलाम बनी तथा अन्याय एवं अत्याचार सहती आ रही हैं ।

अपने उदार व्यवहार से नर को चाहिए कि वह नारी में आत्म विश्वास जगाएं । उसे आश्वस्त एवं विश्वस्त करे, अपने व्यवहार से तब तक पुरुष वर्ग नारियों के हृदय पर यह छाप नहीं छोड़ेंगे कि वे उनकी दासी नहीं बल्कि संगिनी हैं, परिवार एवं समाज के लिए उनका बहुत कुछ मूल्य एवं महत्व है तब तक नारियों में न आत्मविश्वास उत्पन्न होगा और न उनका मन हीन भावना से मुक्त होगा । जब तक नारी के हृदय से इन दोनों निराशाओं को दूर न किया जाएगा, सुविधा, साधन तथा अवसर पाकर भी वे किसी योग्य न बन पाएंगी ।

पुरुष वर्ग को चाहिए कि जो बुराइयां आज घर कर रही हैं कल वही हमारा घर जला डालेंगी । इसलिए नारी वर्ग को आगे लाने में तन, मन, धन से जुट जाना चाहिए तभी हमारी चतुर्दिक उन्नति संभव है ।

नारी की आज जो स्थिति है उसे किसी भी प्रकार न्यायोचित नहीं कहा जा सकता । मनुष्य के कुछ जन्म सिद्ध अधिकार हैं । प्रत्येक मानव प्राणी को अपनी मर्जी का नैतिक जीवन जी सकने की स्वतंत्रता रही है और रहनी चाहिए । मैत्री के आधार पर कोई किसी के लिए कुछ भी त्याग कर सकता है पर कैदी के अतिरिक्त अन्य किसी को बंधन में बांधने का, उसको बलात् उपयोग करने का अधिकार नहीं है । पर नारी इस मूलभूत मानवी अधिकार से भी वंचित है । कन्या का उसके अभिभावक कहीं भी किसी के साथ भी ब्याह कर सकते हैं या बेच सकते हैं । पति उसे बलात् अपने अधिकार में रख सकता है और अनिच्छा होते हुए भी जो चाहे सो अपनी मर्जी के अनुसार करा सकता है । उसके साथ चाहे जैसा व्यवहार कर सकता है, पशुओं जैसी मारपीट कर सकता है, लुक छिपकर जान भी ले सकता है, यह स्थिति मनुष्य के मूल अधिकारों के विपरीत है । स्वेच्छा जीवन जीने पर इतने कड़े प्रतिबंधों का होना किसी भी दृष्टि से न्यायोचित नहीं है । पर्दा प्रथा के

अनुसार जिस स्थिति में नारी को रहना पड़ता है उसे मानवोचित नहीं कहा जा सकता । किंतु शताब्दियों से चली आ रही अवांछनीय परंपराओं ने इन्हीं विडंबनाओं को 'मर्यादा' के रूप में मान्यता दे दी है । अब लोग, उन बातों को अन्याय तक नहीं मानते वरन् उचित आवश्यक तक कहते हैं और उन्हीं तर्कों का, धर्म प्रचलनों का सहारा लेकर उन प्रतिबंधों का समर्थन करते हैं ।

इस स्थिति में चिरकाल से रहती चली आ रही नारी धीरे धीरे अपनी मानवी उपलब्धियों से वंचित होती चली गई और आज की सुखद स्थिति में आ पहुंची । घर के छोटे से पिंजड़े में आजीवन कैद रहने के कारण उसका स्वास्थ्य चौपट हो गया । खुली हवां, धूप, हाथ पांव हिलाने की स्थिति न मिलने पर स्वास्थ्य का सर्वनाश होता ही है । छोटी आयु में विवाह हो जाने पर किशोरावस्था और नव यौवन के दिनों होने वाले शारीरिक विकास की जड़ें ही कट जाती हैं । शरीर शास्त्र का स्पष्ट निष्कर्ष है कि बीस वर्ष से कम आयु में कामोपभोग और पच्चीस वर्ष से कम आयु में संतानोत्पादन नारी के स्वास्थ्य को सटियामेट करके रख देता है । उसे छोटी बड़ी अनेक बीमारियां आरंभ में ही घेर लेती हैं और मरते दम तक साथ रहती हैं । पेडू का दर्द, कमर का दर्द, पेट दुखना, मासिक धर्म की अनियमितता, श्वेत प्रदर, पेशाब में जलन जैसे रोग स्पष्टतः शक्ति से अधिक मात्रा में जननेन्द्रिय का दुरुपयोग किए जाने के ही दुष्परिणाम हैं । छोटी आयु से ही कच्चे अंग अवयवों पर जब दाम्पत्य हलचलों का अमर्यादित भार पड़ेगा तो उससे स्वास्थ्य की जड़ें खोखली होती हैं । स्त्रियों में से अधिकांश को अपच, सिर दर्द, अनिद्रा, हाथ पैरों में मड़कन, आंखों में जलन, मुंह में छाले, थकान, सुस्ती, बेचैनी, उदासी जैसी शिकायतें बनी रहती हैं । इसका कारण उनकी जीवनी शक्ति का क्षीण हो जाना ही होता है । जिन लड़कियों का अपना शरीर ही सुविकसित नहीं हो पाया उनके ऊपर समय से पहले बच्चे पैदा करने का भार पड़ेगा तो वह शक्ति जो अपना शरीर पुष्ट कर सकती है, सहज ही समाप्त हो जाएगी । बच्चे का शरीर आखिर माता

का शरीर काट कर ही तो बनता है । उसका रक्त, मांस, हड्डियां आदि जो कुछ है वह स्पष्टतः माता के पास जो शरीर संपत्ति थी उसी का एक टुकड़ा अलग से टूट कर खड़ा होता है । जो दूध बच्चा पीता है वह माता के रस के अतिरिक्त और क्या है ? उसे बच्चा पीता रहेगा तो माता के शरीर में उसकी कमी पड़ेगी ही । जो रक्त मांस लड़कियों के अपने स्वास्थ्य संवर्धन के लिए आवश्यक था वही यदि संतान में निकलता चला जाए तो स्पष्ट है कि इस कारण उसे स्वास्थ्य की दृष्टि से दुर्बल, रुग्ण और गई गुजरी स्थिति में रहना पड़ेगा । दुर्बल के पास न रूप बचता है, न यौवन, न सौन्दर्य, न उत्साह, न स्फूर्ति, न ताजगी, न मुस्कान । लड़कियों को छोटी उम्र से ही दाम्पत्य जीवन के दबाव में जिस प्रकार पिसना पड़ता है वह उनकी अकाल मृत्यु का बहुत बड़ा कारण है । प्रसव पीड़ा से लाखों महिलाएं हर साल बेमौत मरती हैं, इसका कारण उनके प्रजनन अंगों की दुर्बल स्थिति होते हुए भी असह्य दबाव पड़ना ही एक मात्र कारण है । प्रसव काल में जितना रक्त जाता है, जितना कष्ट होता है, उसे परिपुष्ट माता का स्वास्थ्य ही सहन कर सकता है, कमजोर शरीर वाली लड़कियों के लिए तो यह बेमौत मारे जाने जैसा अभिशाप है । स्वास्थ्य की दृष्टि से अविवाहिताएं तथा विधवाएं सुहागिनों की तुलना में कहीं अच्छी पाई जाती हैं इसका कारण यही है कि उन्हें दाम्पत्य कर्म का बोझ नहीं सहना पड़ता ।

यहां यह नहीं कहा जा रहा है कि विवाह नहीं करना चाहिए । दाम्पत्य जीवन अनावश्यक है और बच्चे उत्पन्न नहीं करने चाहिए । ये सब बातें सहज स्वाभाविक रीति से होनी चाहिए । स्त्री का स्वास्थ्य जितना सहन कर सके उस पर उतना ही दबाव पड़ना चाहिए । किंतु इस क्षेत्र में नारी सर्वथा असहाय है, वह इस संबंध में मुंह नहीं खोल सकती । पति की इच्छा पूर्ति के लिए उसे विवश रहना पड़ता है, संतानोत्पादन के लिए शरीर में गुंजायश न होने पर भी उसे वह भार बलात् उठाना पड़ता है । अपना स्वास्थ्य नष्ट होने, दुर्बलता, रुग्णता और अधिक बढ़ने, अस्वस्थ संतानें जनने, गर्भपात आदि होते रहने, असह्य प्रसव पीड़ा न सह सकने,

अकाल मृत्यु को गले न बांधने जैसे विचार उसके मन में उठते रहते हैं, पर वह कह कुछ नहीं सकती, कुछ कर नहीं सकती । पराधीन की स्वेच्छा क्या ? उसकी अपनी मर्जी कहां ? बंदी को मालिकों की मर्जी पर ही चलना पड़ता है । उसे अपने स्वास्थ्य की बात सोचने का अधिकार ही किसने दिया है ।

सोने, उठने का कोई समय नहीं । मर्द रात को १२ बजे आए तो उसी समय चूल्हा फूंकना चाहिए । सब लोग खा जाएं उसके पीछे खाना चाहिए । सबसे पीछे सोना और सबसे जल्दी उठना चाहिए । विश्राम के लिए समय की मांग न करनी चाहिए । रुग्ण रहते हुए भी दिन रात पिसना चाहिए । यही आज की नारी का धर्म कर्तव्य बताया गया है । इससे कम में कोई 'अच्छी बहू' नहीं कहला सकती । यह सब धकापेल चलता रहे, चले, पर प्रकृति किसी को बख्शती नहीं । उसे अपने नियमों से काम । दुरात्मा हो या पुण्यात्मा बिजली के खुले तार जो भी छूएगा वही मरेगा । स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन निरंतर करते रहने पर प्रकृति दण्ड देगी ही । दुर्बलता, रुग्णता, अकाल मृत्यु के चक्र में उसे पिसना ही पड़ेगा । नारी ने यह व्यक्तिक्रम स्वेच्छा से किया या उसे विवशता में करना पड़ा, यह सोचने की प्रकृति को फुरसत नहीं है, नारी नर की तुलना में शारीरिक दृष्टि से कितनी दीन, दुर्बल बनकर रही है वह सहज स्वाभाविक स्थिति नहीं है । सभ्य देशों की महिलाएं हर क्षेत्र में, स्वास्थ्य में भी पुरुष के समतुल्य हैं । यह अभागा भारत ही है जिसने नारी को मानवोचित अधिकारों से वंचित किया । फलस्वरूप जो परिस्थिति उत्पन्न हुई उसने नारी के स्वास्थ्य को खा लिया । इसे भाग्य का, भगवान का दोष कहकर मन समझाया जा सकता है, पर वस्तुतः यह हमारे ही अनाचार, अत्याचार का दुष्परिणाम है जिसे रोते–कराहते नारी तो भुगतती है, पर इस स्थिति में नर भी कुछ अधिक प्रसन्न नहीं रह सकता है, इसमें उसे भी कुछ लाभ उठाने का अवसर नहीं है । शोषित तो मिटता ही है, शोषक को भी विधि का विधान सुख की सांस नहीं लेने देता । नारी को अस्वस्थ बनाकर उसके मालिक, पालने वाले भी इस स्थिति में क्या सुख संतोष अनुभव कर रहे हैं । रोते–

कराहते स्वर आखिर उन्हें भी कुछ तो कष्ट देंगे ही । सहानुभूति समाप्त हो गई हो तो भी खीज और झुंझलाहट तो सताती ही रहेगी, उससे तो पीछा नहीं ही छूटेगा ।

शारीरिक स्वास्थ्य की तरह मानसिक स्वास्थ्य से भी नारी को वंचित रहना पड़ रहा है । जिसकी अपनी कोई इच्छा, महत्वाकांक्षा, मर्जी, पसन्दगी न हो, जिसे जन्म से मरण तक बिना उचित अनुचित का अंतर किए केवल आज्ञापालन ही करना है उसके लिए अपना भविष्य निर्माण करने की बात सोचना ही निरर्थक है । प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के विकास में स्वतंत्र चिंतन का, महत्वाकांक्षाओं का, कुछ कर सकने की परिस्थिति का प्रधान योगदान होता है । वह न मिले तो खाद पानी न मिलने वाले पौधे की तरह ज्वलंत संभावनाएं भी नष्ट हो जाती हैं । ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा कितनी ही क्यों न हो पालने वालों की मर्जी के बिना उसका उपयोग कर सकने का नारी के लिए कोई अवसर नहीं । इच्छा तो आखिर हर किसी की कुछ न कुछ होती ही है । उन्हें फलवती करने का जब अधिकार ही नहीं तो आकांक्षाओं की चिता और राख मनःक्षेत्र में घुटन की दुर्गंध ही भरे रहेगी ।

पग-पग पर प्रतिबंध, क्षण-क्षण में तिरस्कार जिसके भाग्य में लिखा हो, वह दुर्भाग्य के आंसू ही बहाता रह सकता है । नारी निष्प्राण मशीन रही होती तो अच्छा था । पर जानदार प्राणी होने के कारण उसका अपना निज का मन भी है और निज की कुछ इच्छाएं भी । स्वभावतः वे फैलने-फूटने, फूलने-फलने का अवसर चाहती हैं, पर इसके लिए अधिकार रहित नारी के लिए गुंजायश कहां ? चौबीसों घण्टे उसे मन को मारना पड़ता है और उस दुष्ट को देखो जो मरता तो है नहीं उल्टे विद्रोही बनकर नाना प्रकार के उपद्रव खड़े करता है । इन्हें तरह तरह के मनोरोगों के-मनोविकारों के रूप में देखा जा सकता है । मृगी, हिस्टीरिया से ग्रसित रोगियों में तीन चौथाई नारी और एक चौथाई मर्द होते हैं । तरह तरह की सनकें, चिड़ चिड़ापन, लड़-झगड़, अनुदारता, दुराव, असंतोष, आशंका, दोषारोपण जैसी मानसिक विकृतियां उन्हें घेरे रहती हैं । सनकी, जिद्दी,

अव्यवस्थित, नासमझ, बेवकूफ, स्वार्थी आदि न जाने कितने दोष उन पर लगाए जाते रहते हैं । जो किस कदर ठीक भी होते हैं । निराशा, चिंता, भय, भीरुता, आशंका, अविश्वास से ग्रसित उनमें से बहुतों को देखा जाता है । संतोषजनक मुस्कान किसी किसी के चेहरे पर ही खेलती हुई देखी जाएगी । यह आदत जिनमें बचपन से थी भी बस गृहस्थ की चक्की में घिसने के कुछ ही दिन बाद समाप्त हो जाती है । असंतोष और क्षोभ से उद्विग्न और खिन्न मुद्रा में ही प्रायः उन्हें देखा जाता है । मन कैसा छलिया है । उसे जहां उद्विग्न करता है वह खिलौने देकर पुचकारता भी है । शृंगार, सजधज, फैशन की भोंड़ी तरकीब बताकर कहता है कुछ न सही तो इस खिलौने से ही मन बहलाओ, अपना जी हलका करो । प्रायः विकृत मन वाली महिलाएं ही शृंगार प्रसाधन अपनाकर अपना खोया सम्मान इस बनावट के सहारे किसी हद तक प्राप्त कर लेने की बात सोचती हैं और उस तरह के आडंबर बनाती हैं । इसमें उन्हें मिलता कुछ नहीं । पैसा और समय तो गंवाती ही हैं मूर्ख, उपहासास्पद और छछोरी भी बनती हैं । प्रशंसा पाने चली थीं, पर उपहास लेकर लौटती हैं । व्यंग रूप में ही कोई मसखरा उनके मुंह पर उस सजधज की शायद प्रशंसा भी कर देता होगा । ये विडंबनाएं वे स्वेच्छा से नहीं छलिया मन के विचित्र बहकावे में फंसकर रचती हैं । असंतोष को संतोष में परिणत करने का कुछ भी ओंधा सीधा मार्ग वे खोजती हैं । इन्हीं में से एक शृंगारिक सजधज भी है । अन्यथा शालीन नारी का व्यक्तित्व तो स्वच्छ, सभ्य और सज्जनोचित सरलता के, सादगी के साथ ही जुड़ा रहता है । विवेक और उद्धत शृंगार का प्रत्यक्ष बैर है, जहां एक रहेगा वहां से दूसरे को पलायन करना ही पड़ेगा ।

स्मरण शक्ति की कमी, आवेश ग्रस्तता, जिद्दीपन, शंकालु, अनुदारता, अदूरदर्शिता, मंद बुद्धि आदि मानसिक त्रुटियां स्त्रियों में बहुत अधिक होने की बात कही जाती है । यदि यह सच है तो इतना ही कहा जा सकता है कि यह उनकी आंतरिक घुटन की प्रतिक्रिया है अन्यथा मानसिक बनावट और प्रखरता में वे नर से पीछे नहीं आगे ही

रहती हैं । स्कूल, कालेजों के परीक्षाफल इसके प्रमाण में प्रस्तुत किए जा सकते हैं । लड़के अधिक और लड़कियां कम फेल होती हैं । अच्छे डिवीजन लड़कियों के हिस्से में आते हैं । वे छुरे, चाकू, हाकी लेकर नकल के बल पर पास होने की उद्दण्डता भी नहीं बरतती, अपनी सहज प्रतिभा और स्वाभाविक श्रमशीलता के आधार पर अच्छे नम्बरों से पास होती रहती हैं । अन्य क्षेत्रों में भी नारी को जब भी जितना भी अवसर मिला है सदा उसने अपनी बौद्धिक प्रखरता का ही परिचय दिया है । न वे शरीर की दृष्टि से दुर्बल हैं और न मानसिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं । परिस्थितियों ने ही उन्हें दुर्दशा ग्रस्त बना दिया है । आज तो वे दुर्बल और रुग्ण ही नहीं, मंद बुद्धि और मानसिक रोगों की व्यथा भी बेतरह सहन कर रही हैं ।

इस शारीरिक और मानसिक अस्वस्थता ग्रसित स्थिति से नारी को उबारा जाना चाहिए अन्यथा वह अपने परिवार के लिए, समाज के लिए कुछ महत्वपूर्ण योगदान दे सकना तो दूर पिछड़ेपन के कारण भारभूत ही बनी रहेंगी । रुग्ण व्यक्ति अपनी बेकारी, पीड़ा, परिचर्या, चिकित्सा आदि के कारण स्वयं दुखी रहता है और अपने संबंधियों को दुखी करता है । नारी की शारीरिक और मानसिक अस्वस्थता हर दृष्टि से, हर क्षेत्र के लिए दुखद दुष्परिणाम ही प्रस्तुत कर रही है ।

राजनैतिक दृष्टि से पराधीन रहने वाला देश आर्थिक दृष्टि से ही शोषित नहीं होता वरन् सांस्कृतिक, मानसिक, चारित्रिक और बौद्धिक दृष्टि से पंगु हो जाता है, ठीक इसी प्रकार सामाजिक दृष्टि से पराधीन बनाई गई नारी भी अपनी प्रखरता और उपयोगिता खो बैठी है । तथ्य को समझा जाना चाहिए और विष वृक्ष के पत्ते तोड़ने की अपेक्षा उसकी जड़ काटी जानी चाहिए । नारी को हर क्षेत्र में विकास का अवसर मिलना चाहिए और उसके पिछड़ेपन को मिटाने के लिए हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए । अपहरणकर्ता के रूप में पुरुष का दोष अधिक है इसलिए प्रायश्चित, परिमार्जन, प्रतिकार की दृष्टि से उसी को आगे आना चाहिए । आघात पहुंचाने वाले को उसका हर्जाना भी देना चाहिए और क्षति पूर्ति के लिए

प्रबल प्रयास करके कलंक कालिमा को धो डालने के लिए तत्पर होना चाहिए । यदि पुरुष वर्ग अपनी इस जिम्मेदारी को समझ ले तो कोई भी कारण नहीं कि देश की आधी जनशक्ति यों अपंग रही आए ।

यह दयनीय दुर्दशा कब तक !

जिस वर्ग में आशा, उत्साह और साहस का उभार होता है वह हर क्षेत्र में आगे बढ़ता है और सुसंपन्न बनता है । जिनमें भोग जन्य शिथिलता बढ़ती है उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में पिछड़ना पड़ता है । इस तथ्य को अमेरिका के नर और नारी वर्ग की स्थिति का विश्लेषण करते हुए सहज ही समझा जा सकता है ।

अमरीकी जनगणना विभाग द्वारा प्रकाशित नई रिपोर्ट के अनुसार उस देश में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक है । ये शारीरिक दृष्टि से भी पुरुषों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ और सबल हैं और औसत अमेरिकी महिला वहां के पुरुषों की तुलना में ७ वर्ष अधिक जीवित रहती है ।

जनगणना के अनुसार अमेरिका की जनसंख्या १२ करोड़ है । इनमें प्रतिशत के हिसाब से पुरुष ९५ और स्त्रियां १०० हैं, पांच प्रतिशत स्त्रियां अधिक हैं । वे पुरुषों की तुलना में लगभग १ करोड़ अधिक हैं ।

उस सुसंपन्न देश में स्वास्थ्य, सफलता, दीर्घ जीवन और संख्या की दृष्टि से महिलाएं पुरुषों से क्यों आगे बढ़ती चली जा रही हैं और पुरुष क्यों पिछड़ते जा रहे हैं, इसका कारण विचारकों ने यह बताया है कि अमरीकी पुरुष संपन्नता के बाहुल्य का उपयोग विलासिता की वृद्धि में करता चला जा रहा है, उसकी भर्त्सना मात्र यह है कि किस प्रकार वासना और विलासिता के साधन जुटाने और उनके उपभोग में निरत रहने का अधिक से अधिक अवसर प्राप्त करे । इसी घुड़दौड़ में पुरुष समाज का ध्यान केन्द्रित है । शिक्षा, आजीविका, सुशासन, सुविधा के प्रचुर साधन होने के कारण अब उन्हें जीवन के किसी क्षेत्र में बड़ा संघर्ष नहीं करना पड़ता । यह निश्चिन्तता उत्पन्न करती है और कोई बड़ा लक्ष्य सामने न रहने पर मनुष्य व्यसन और व्यभिचार में अधिकाधिक निमग्न होता चला

जाता है । उस देश के पुरुषों की मनःस्थिति और क्रिया पद्धति का रुझान अब इसी दिशा में बढ़ता चला जा रहा है ।

प्रकृति का अकाट्य नियम सदा से यही रहा है कि पुरुषार्थी और संघर्षशील प्रगति करते हैं और विलासी गलते गिरते चले जाते हैं । इसी नियम के आधार पर उस देश के पुरुष क्रमशः अपना स्वास्थ्य, सौन्दर्य, दीर्घ जीवन, बल, पुरुषार्थ खोते चले जा रहे हैं । नारी को संतुष्ट करने योग्य काम शक्ति में भी ह्रास होने का रहस्योद्घाटन वहां की स्वास्थ्य अन्वेषी संस्थाओं ने किया है । उनका कहना है–मनः स्थिति पुरुषों की अधिक विचलित रहती है । जहां तक काम पुरुषार्थ का प्रश्न है, नारी की तुलना में नर की स्थिति क्रमशः दयनीय होती चली जा रही है ।

संसार के सभी क्षेत्रों में नारी पीड़ित और पददलित रही है । योरोप एवं अमेरिका भी इसके अपवाद नहीं हैं । शिक्षा और प्रगतिशीलता की बढ़ोत्तरी ने नारी को नर की समानता का अवसर दिया है । उसका पूरा लाभ वहां की महिलाएं उठा रही हैं । वे अधिक सुयोग्य, अधिक समर्थ बनने पर अपना ध्यान केन्द्रित किए हुए हैं । पुरुष के सहयोग का वे लाभ तो उठाती हैं पर उनका गुलाम बनने से सर्वथा इन्कार करती हैं । पुरुष का लक्ष्य भले ही विलासिता बन गया हो पर वहां की नारी ने प्रगतिशीलता पर ही अपनी महत्वाकांक्षाएं केन्द्रित की हैं और उसी आधार पर अपनी रीति नीति निर्धारित की है । यही कारण है कि उनके दृष्टिकोण के अनुरूप प्रकृति उनकी सहायता कर रही है और वे क्रमशः हर क्षेत्र में अग्रणी बनती चली जा रही हैं । शिक्षा, शिल्प, विज्ञान, स्वास्थ्य, साहस, प्रगति हर क्षेत्र में वे पुरुषों की तुलना में अधिक सफलता प्राप्त कर रही हैं । प्रतियोगिता के हर अवसर पर पुरुष की तुलना में उस देश की नारी की सफलता का प्रतिशत क्रमशः बढ़ता ही चला जा रहा है ।

जिन देशों में नारी को प्रगति के अवसर नहीं मिल रहे हैं और वह कड़े प्रतिबंधों के बीच बाधित जीवन जी रही है वहां स्वभावतः पुरुषों की

स्थिति अच्छी और नारियों की गई गुजरी है । मध्य पूर्व के इस्लाम धर्मानुयायी अपनी स्त्रियों पर पर्दा बुर्का आदि तरह–तरह के प्रतिबंध लगाते रहे हैं । एक एक पुरुष का बहुत सी स्त्रियां हरम में रखना और उनकी आकांक्षाओं पर प्रतिबंध लगाए रहना उस क्षेत्र की परंपरा जैसी बन गई है । यही कारण है कि उन देशों में स्त्रियों का स्वास्थ्य अपेक्षाकृत गिरा हुआ है । मृत्यु दर उन्हीं की बढ़ी चढ़ी है । साथ ही महिलाओं की संख्या घटती और पुरुषों की बढ़ती जाती है । हर पुरुष को विवाह करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है और गृहस्थी बसाने के लिए भारी जोड़ तोड़ मिलाने पड़ते हैं

भारत में महिलाओं की मृत्यु संख्या पुरुषों की तुलना में अधिक है । वे ही अधिक कमजोर पाई जाती हैं और बीमार भी अधिक पड़ती हैं । उसका कारण नारी को बाधित और प्रतिबंधित करने वाली सामाजिक कुरीतियां ही प्रमुख हैं । वे जब तक इसी रूप में बनी रहेंगी–स्वभावतः नारी को दयनीय स्थिति में ही पड़ा रहना पड़ेगा ।

अमेरिका का उदाहरण यह सिद्ध करता है कि प्रगतिशीलता ही सफलताओं की जननी है । प्रकृति उन्हीं को आगे बढ़ाती है जिनमें उत्साह, साहस और पुरुषार्थ का उभार उठता है और महत्वाकांक्षाएं बढ़ी चढ़ी होती हैं । अमेरिकी नारी ने अपने को इस कसौटी पर वहां के पुरुषों की तुलना में अधिक अग्रगामी सिद्ध किया है, फलस्वरूप उन्हें प्रकृति ने मुक्त हस्त से सहायता दी है और वे क्रमशः आगे को बढ़ती चली जाती हैं ।

अगले दिनों नारी द्वारा विश्व का नेतृत्व किए जाने की संभावना इसीलिए अधिक है कि पददलित वर्ग को अगले दिनों अनीति मूलक प्रतिबंधों से छुटकारा पाने का अवसर मिलने ही वाला है । ऐसी दशा में वे अपने को सुविकसित एवं सुयोग्य बनाने का प्रयत्न करेंगी । फलस्वरूप प्रकृति का पूर्ण सहयोग भी उन्हें मिलेगा और विश्व के नव निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका संपादित करेंगी ।

पुरुष के हाथ में चिरकाल से सर्वतोमुखी शक्ति रही है । नारी का

स्वत्व अपहरण करके भी उसी ने अपनी मुट्ठी में रखा है । पर उसका सदुपयोग नहीं किया वरन् अनीति मूलक रीति नीति ही अपनाई है । युद्ध, शोषण और उत्पीड़न में ही प्रायः उसका पुरुषार्थ नियोजित होता रहा है । प्रकृति को यह सहन नहीं । वह उसके हाथ से उतने समय के लिए सत्ता छीनने वाली है जब तक कि उसे वर्चस्व के सदुपयोग करने की बात समझ में न आ जाए ।

विश्व संतुलन नारी के पक्ष में जा रहा है । अमेरिका में बढ़ता हुआ नारी वर्चस्व, उस प्रभात कालीन सूर्योदय के समान है जिसका प्रकाश क्रमशः अधिक प्रखर और अधिक व्यापक ही होने वाला है । हम देखेंगे कि समस्त विश्व में नारी किस प्रकार पिछड़ेपन से अपना पीछा छुड़ा कर प्रगतिशील बनती है और स्वाभाविक महानता को विकसित करके किस प्रकार विश्व में प्रेम और न्याय का शासन स्थापित करने में योगदान करती है । पुरुष के लिए यह उदाहरण आत्म चिंतन करने और आत्मसुधार करने का अच्छा अवसर होगा ।

नर नारी का संतुलित समन्वय ही मानव जाति का भविष्य उज्ज्वल करेगा । असंतुलन दूर होना ही चाहिए । इसे प्रकृति किस प्रकार व्यवस्थित करने जा रही है इसका उभार हमें अमेरिका में देखना चाहिए । विश्व में उसी क्रम के विस्तार की आशा करनी चाहिए । पिछड़ता पुरुष भी आज नहीं तो कल आत्मग्लानि अनुभव करेगा और कुमार्गगामिता छोड़कर वह रीति नीति अपनाएगा जिसके आधार पर नर नारी दोनों ही भगवान की दाईं बाईं भुजा के रूप में पारस्परिक सहयोग और सद्भाव का परिचय देते हुए सुखी समाज का सृजन कर सकें ।

दिन दिन गिरती हुई नारियों की दशा देखकर जब उस पर विचार किया जाता है तो यही पता चलता है कि वह स्वार्थी पुरुषों द्वारा जाने अनजाने एक लंबे समय से छली जा रही है । नारी के प्रति बहुत से व्यवहार उसके विकास के विरुद्ध एक प्रकार से मोहक षडयंत्र जैसे लगते हैं जिसमें बेचारी अबोध अबला फंसती पिसती चली आ रही है और आज भी मुक्त नहीं हो पा रही है । कितना अच्छा हो कि पुरुष अपने स्वार्थ के

लिए षड़यंत्र करना बंद कर दे जिससे समाज का यह अर्धांग भी विकसित एवं उन्नत हो सके ।

अशिक्षा नारी के लिए एक षड़यंत्र है जिसके आधार में ऐसी सुन्दर बातें बना रखी हैं जो देखने में नारी के लिए बड़ी हितकर तथा सद्भावना पूर्ण मालूम होती हैं कि–''नारियों के लिए पढ़ना जरूरी नहीं । उन्हें कोई नौकरी चाकरी तो करनी नहीं, किसी घर की मालकिन बनना है । तब घर गृहस्थी का काम सीख लेना काफी है । पढ़ाई में सिर खपाने की क्या जरूरत ।''

''कन्याएं जब तक गृहस्थी का काम काज सीखकर तैयार होती हैं तब तक विवाह योग्य हो जाती हैं । ब्याह कर पराए घर चली जाती हैं । उन बेचारियों के पास इतना समय कहां कि वे घर गृहस्थी का काम सीखने के साथ साथ पाठशाला भी जा सकें और शिक्षा में समय दे सकें ।''

विवाहितों के प्रति अशिक्षा के पक्ष में सहानुभूति दिखलाने और बहलाने के तर्क भी कुछ कम दिलचस्प नहीं होते । कहा जाता है कि–' 'वधुएं घर की शोभा और कुल की लाज होती हैं । उनका खुले आम बाहर निकलने का सस्तापन उनका गौरव घटाता है । पाठशाला आने जाने में उन्हें बहुत कुछ बेपरदगी करनी होगी । घर का काम काज छोड़कर पढ़ने जाना पड़ेगा और बाद में आकर घर का काम निपटाना होगा जिससे दूना परिश्रम पड़ जाएगा, जिसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर अच्छा नहीं पड़ेगा और यदि दो एक बच्चे हुए तो पाठशाला के समय बेचारे मां के लिए रोते बिलखते रहेंगे, जिससे जननी और जात दोनों को मानसिक पीड़ा होगी ।'' जिससे उनकी जिन्दगी एक नीरस यंत्र की तरह बनकर रह जाती है, आदि आदि । न जाने कितने तर्क उनकी शिक्षा के विरोध में दिए जाते हैं जो कि बड़े ही लुभावने, सद्भावनापूर्ण और स्वयं नारी को भुलाने वाले हो सकते हैं ।

यों तो तर्क देने की बात ही क्या ? जब तर्क ही आधार है तब तो जिन्दगी को मौत और दिन को रात कहने के लिए अनेक लक्षणों को

दिखाया और निकाला जा सकता है । किंतु सत्य इनसे भिन्न होता है । वास्तविकता यह है कि नारी को अशिक्षित एवं अविकसित रखकर पुरुष उसके अधिकार एवं अस्तित्व का ज्ञान नहीं होने देना चाहता है कि वह उसे पशु की तरह जिस प्रकार बरतता, लूटता और मिटाता आया है वैसी ही मनमानी आगे भी करता रह सके । शिक्षा नारी के मुख में जुबान, हृदय में भावना, बुद्धि में विचार और आत्मा में जागरण उत्पन्न कर देगी । तब ऐसी स्थिति में पुरुष की अनुचित मनमानी न चल पाएगी । नहीं तो सहनशीलता, सादगी, परिश्रम, दक्षता, कुशलता, सामंजस्य, शीलता आदि ऐसा कौन सा गुण है जो कि शिक्षा द्वारा नहीं पाया जा सकता और इनके विपरीत ऐसा कौन सा दुर्गुण हो सकता है जिसका समावेश अशिक्षा नहीं कर सकती । यह बात दूसरी है कि शिक्षा के विषय अनुकूलता, उपयुक्तता तथा उपयोगिता का विचार न रखा जाए और नारी के पल्ले उस प्रकार की शिक्षा दीक्षा बांध दी जाए जो उसके अनुकूल एवं अनुरूप न हो । नारी के प्रति इस प्रकार का षड़यंत्र बंद किया जाए और अवसर दिया जाए तो वह अवश्य ही अपने अन्य कर्तव्यों की उपेक्षा किए बिना उसे ग्रहण कर लेगी और परिवार में अपनी विकसित शालीनता से गौरव की वृद्धि कर देगी ।

नारी को बहुप्रजनन के व्यामोह में डालने के लिए कहा जाता है कि– "यह कितनी भाग्यवान नारी है, उसके आठ संतानें हैं । भगवान सबको ऐसा बनाए । घर में छह बहुएं और दो जमाई आएंगे । घर जल्दी ही नाती पोतों से भर जाएगा । कमाई उठाते धरते न बनेगी । एक बहु रोटी बनाएगी तो एक पैर दावेगी । कोई सिर में तेल लगाएगी तो कोई पंखा झलेगी । बच्चे सब पल जाएंगे, आज का परिश्रम बुढ़ापे में सुख बन जाएगा । पलंग पर बैठी हुक्म चलाएगी । तिनका तोड़ने की जरूरत न होगी । मरेगी तो नाती पोतों के कंधों पर जाएगी, ऐसी फली फूली फुलवारी छोड़कर जाने वाली को स्वर्ग से लेने के लिए विमान आते हैं ।" आदि आदि न जाने कितनी बातें करके नारियों को बहुसंतान के लिए प्रेरित किया जाता है । उन्हें अधिक संतानों से होने वाली हानियों तथा

तकलीफों का अनुभव ही नहीं होने दिया जाता । इसका नतीजा यह होता है कि वह अधिकाधिक संतानों को परमात्मा की कृपा मानकर निषेधवती हो ही नहीं पाती और पुरुष की पाशविक प्रवृत्ति में बलिदान होती रहती है ।

अकाल वृद्धा, बुझे रूप, ढले शरीर, जर्जर स्वास्थ्य, रुग्णा नारियां जो देखने में आती हैं वे सब अधिक प्रजनन की मारी हुई होती हैं । हाथ में शीशी, शिथिल चाल, सूखे ओंठ, वधू के योग्य वस्त्र जिस श्वेत केशिनी को देखें समझ लें कि यह वह तरुणी है जो बहुसंतान की सौभाग्यवादिता के षड़यंत्र में फंसी, पुरुष की वासना की मारी अकाल वृद्धा है, जो अशिक्षा, अज्ञान और अंधविश्वास के कारण अपने अस्तित्व को भूली हुई अपने को इसी योग्य समझती है ।

कितना जरूरी है कि नारी को बहुसंतान की सौभाग्यशीलता के षड़यंत्र से मुक्त कर स्वास्थ्यपूर्ण सुन्दर जिन्दगी जीने दिया जाए जिससे वह अपने स्वाभाविक सौन्दर्य एवं शारीरिक सौष्ठव को सुरक्षित रख सके और आदि से अंत तक अकाल कंकाल के बजाय मानवी मालूम हो सके । परिवार नियोजन के पुण्य से उसे पवित्र किया जाए जिससे वह केवल दो संतानों को रुचि से पाल सके और अपने वात्सल्य को बिन्दु बिन्दु बांटने के बजाय एक स्थान पर केन्द्रित कर उसका सुख ले सके और स्वास्थ्य सुयोग्य संतान की जननी होने का गौरव पा सके । इसी में परिवार, समाज तथा राष्ट्र की भलाई है ।

साहित्यकार और कलाकार उनमें भी कवि, कहानीकार तथा चित्रकार तो नारी पर कृपा करें ही । उनकी लेखनी और तूलिका तो नारी के जिस उद्दीपक रूप का चित्रण करनें में संलग्न है वह राष्ट्र की जननी के प्रति इतना भीषण षडयंत्र है, जो समग्र राष्ट्र के पतन का कारण बनता जा रहा है । यह स्पष्टोक्ति अतिशयोक्ति नहीं कही जा सकती कि नारी को विलासिनी और पुरूष को कामुक बनने के लिए बढ़ावा देने में इन लेखकों तथा कलाकारों का बहुत बड़ा हाथ है । श्रृंगारिक कविताएं, प्रेमपरक कथाएं और उद्दीपक चित्रों ने तो नारी के पवित्र

स्वरूप को ही छिपा डाला है । कवियों की उपमाओं, रूपकों तथा अलंकारों, शशिमुखी, लवंगलता, पिकबैनी, गजगामिनी, सुकुमारी, लाजवंती, सुन्दरी, सुनयनी, प्रेयसी, प्रणयमती, प्राणप्रिया आदि के ठगोरे संबोधनों ने तो नारी की अकल ही काट दी है । उसे सुनहरे और जादू जैसे स्वप्नों में खोकर आत्म विस्मृत ही कर दिया है जिनसे वह पुरुष की वासना के अधिकाधिक अनुकूल बनकर उपयोगी सर्वस्व को निरुपयोगी बनाती चली जा रही है । कथाकारों ने तो उसे प्रेम की उस मरुमरीचिका में भुलाया है जहां जाकर उसका फिर सुरक्षित लौटना संभव नहीं । वह पुरुष के उस भ्रामक तथा अव्यावहारिक प्रेम को पाने के लिए अपना कितना और क्या कुछ गंवाकर जैसी दुर्गति बनाती है इसका विचार हृदय ही कंपा देता है ।

शताब्दियों से नारी को इसी तरह पददलित किया गया, पैरों तले रौंदा गया, उस पर तरह तरह के बंधन, प्रतिबंध लगाए गए और उसे घर की चहारदीवारी में ही काराबद्ध रखा गया । यह व्यवहार तो पशु के साथ ही किया जा सकता है । हालांकि उचित इसे भी नहीं कहा जा सकता । परंतु यहां तक भी गनीमत थी । नारी की दुर्दशा और समाज में उसका पिछड़ापन भी किसी सभ्य समाज के लिए लज्जा की बात हो सकती है, पर हमारे देश में तो उससे भी एक कदम आगे बढ़कर उसके साथ आवारा पशु की तरह व्यवहार किया जाता है ।

घरों में पालतू जानवर पाले जाते हैं । जब तक वे दूध देते हैं या घरों के लिए उनका उपयोग होता है तब तो उन्हें चारा पानी दिया जाता रहता है और जैसे ही वे फालतू हो जाते हैं उन्हे कसाई के हाथों बेच दिया जाता है । नारी के प्रति तो इससे भी गिरा हुआ दृष्टिकोण अपनाया जाता है । आए दिनों समाचार पत्रों में इस तरह के समाचार छपते रहते हैं कि अमुक स्थान पर अमुक स्त्री की हत्या कर दी गई और हत्या भी इतने नृशंस ढंग से कि क्रूर से क्रूर अत्याचारी, डाकू, बदमाश भी क्या करते होंगे । समाचार पत्रों को यदि ध्यानपूर्वक पढ़ा जाए तो प्रत्येक अंक में एक दो समाचार ऐसे अवश्य मिलेंगे जिनमें किसी साधारण से कारण को लेकर

गृहस्वामी ने गृहणी की हत्या कर दी ।

यहां ऐसे ही कुछ समाचार संकलित कर प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिनमें गृहिणी की हत्या का एक ही ढंग अपनाया गया । मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा देना । ठीक उसी तरह जिस प्रकार कि किसी बेकार पड़े कूड़े के ढेर को मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी जाती है । इन घटनाओं के मूल में जाएं तो ऐसे छोटे छोटे कारण दिखाई देंगे जिनके लिए किसी की हत्या करना तो क्या निन्दा करना भी उचित नहीं लगता । उदाहरण के लिए सद्यः विवाहित दंपत्ति के प्रथम परिचय और प्रारंभ के आकर्षण को ही लें जो किसी भी तरह अस्वाभाविक नहीं कहा जाता, परंतु कुछ महीनों पूर्व इसी कारण भाई बहिन दोनों के द्वारा अपनी भाभी की हत्या कर देने का समाचार अखबारों में प्रकाशित हुआ था ।

घटना कोरबा (म० प्र०) के पास कोहड़िया गांव की है । जहां देवर और ननद दोनों ने मिलकर अपनी भाभी की हत्या कर डाली । बताया जाता है कि कोहड़िया निवासी संबंधित परिवार में मृत महिला जिसका नाम कमला था–कुछ दिनों पूर्व ही ब्याह कर आयी थी । हत्या का कारण तो ज्ञात नहीं हो सका , पर चर्चा है कि नव विवाहित दम्पत्तियों की तरह कमला और उसका पति भी बड़े ही स्निग्ध स्नेह पूर्ण ढंग से प्रेमपूर्वक रहते थे । इस पर कमला की ननद और देवर ने महसूस किया कि उनकी भाभी ने उनके भाई पर जादू कर दिया है और इस कारण वह उनकी उपेक्षा करने लगा है । कह नहीं सकते कि हत्या का यही कारण रहा हो, परंतु देवर और ननद ने मिलकर अपनी भाभी के कपड़ों पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और फिर आग लगा दी । कमला जोर से चीखकर बाहर भागी । लोगों ने उसकी चीख सुनी और उसके कपड़ों में आग लगी देखी तो आग बुझाने का प्रयत्न किया । आग तो बुझ गई पर वह महिला बुरी तरह जल गई थी । किसी राहगीर ने इस घटना की सूचना पुलिस को दे दी । पुलिस ने दग्ध महिला को अस्पताल पहुंचाया । वह इतनी बुरी तरह जल गई थी कि उपचार करने परभी उसे बचाया न जा सका ।

घर के दूसरे सदस्य ही स्त्री पर अत्याचार करते हों ऐसी बात भी नहीं है । पुरुष भी उसके साथ कोई मानवीयता बरतना आवश्यक नहीं समझते । पति की दृष्टि में वह जीवन साथी की अपेक्षा विलासिनी और भोग्या ही अधिक रहती है जिसके लिए हर स्थिति में अपने पति की इच्छा पूरी करना ही उसकी नियति है । फिर पति भले ही स्वयं घृणित जीवन जी रहा हो या कुमार्ग पर चल रहा हो । पति को तो उसका प्रेम पूर्ण अनुशासन तक सहन नहीं होता । उसके सुझाव परामर्श उसे अनुचित हस्तक्षेप लगते हैं तथा स्थिति ज्यादा बिगड़ती है तो वह मारपीट तक के लिए उतारू हो जाता है ।

कुछ समय पूर्व एक पति ने अपनी पत्नी की केवल इसलिए हत्या कर डाली थी कि वह उसे दुराचारी जीवन जीने से अक्सर रोका करती थी । घटना मुजफ्फरपुर जिले के फतेहाबाद गांव की है, जहां एक २० वर्षीय महिला की अमानुषिक ढंग से हत्या कर देने का समाचार पिछले दिनों अखबारों में प्रकाशित हुआ था । हत्या के बाद उस महिला के शव को नदी में बहा दिया गया ताकि पुलिस को पता न चले । बताया जाता है कि रात के सन्नाटे में उक्त महिला के हाथ पाँव बांध दिए गए और उसके पति ने महिला के बदन पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा दी । इस बीच अंदर से घर के दरवाजे भी बंद कर लिए गए थे, ताकि पड़ोसी घटनास्थल पर न पहुंचें । महिला के मुंह में कपड़ा भी ठूंस दिया गया, ताकि वह शोर न मचा सके । बताया जाता है कि उक्त महिला का दाम्पत्य जीवन पिछले कुछ महीनों से अत्यंत कटु हो गया था क्योंकि उसके पति के कई स्त्रियों से अनुचित संबंध थे जिसका वह विरोध करती रहती थी । दुराचारी पति ने उसे अपने मार्ग से हटाने के लिए उसकी हत्या ही कर डाली ।

अब कोई बताए कि ऐसी स्थिति में कोई स्त्री किस प्रकार पति के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कर सकती है और सच्चे अर्थों में जीवन साथी की भूमिका निभा सकती है । जहां पति को अनैतिक मार्ग पर जाने से बचने की सलाह देना भी क्लेश का कारण बन जाए और मारपीट से

लेकर हत्या तक की नौबत आ जाए वहां नारी का दर्जा कितना गिरा हुआ होगा यह कहने सुनने की नहीं अपने आस पास के जीवन में ही देखने की बात है, क्योंकि चर्चा जिस समाज की की जा रही है वह अपना ही समाज है । अपने उसी समाज में नारी के साथ यह नृशंसता और क्रूरता पूर्ण बर्ताव किया जाता है । जहां के ऋषियों ने गाया है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।'

लेकिन अपने इस समाज में नारी की नहीं उसके साथ आयी लक्ष्मी की पूजा की जाती है । यह देखा जाता है कि विवाह के बाद कोई युवती अपने साथ कितना दान दहेज लायी है । विवाह का आधार जीवन साथी की आवश्कयता पूरी करना नहीं, वधू पक्ष से अधिक से अधिक रकम ऐंठ लेना ही बन गया है और उसकी सफलता इसमें नहीं समझी जाती कि पति–पत्नी एक दूसरे के प्रति कितना सामंजस्य तथा प्रेम भाव विकसित कर पाते हैं वरन् यह समझा जाता है कि विवाह के बाद भी कौन पत्नी अपने मायके से कितना धन लाने में सफल होती है । कम दहेज मिलने के कारण वधू को ताने मारना, उसके मायके वालों पर व्यंग करना तो जैसे आम बात हो गई है । कई बार तो कम दहेज मिलने के कारण बहू की हत्या तक कर दी जाती है । उसे नृशंसतापूर्वक जला देने की घटनाएं आए दिन समाचार पत्रों में छपती हैं ।

गंगानगर के पास पीली बंगा निवासी बनवारीलाल सुनार के पुत्र श्री किशनलाल का विवाह जुलाई ७५ में बंदूराम की लड़की सुलोचना के साथ हुआ था । विवाह के समय लड़के के पिता ने दहेज में जेवर, कपड़े के अलावा पांच हजार एक सौ एक रुपए की मांग की । लड़की के बाप ने लड़की की खुशी के लिए अपना खेत बेच दिया और दो हजार एक सौ रुपए टीके की रस्म अदायगी पर ही दे दिए । विवाह के समय जेवर, कपड़ा और अन्य सामान के साथ विदाई के समय जब एक हजार रुपए थाली में रखकर उसने लड़के के बाप को दिए तो वह नाराज हो गया । बड़ी मुश्किल से कन्या पक्ष ने समधियों को राजी किया और हाथ पैर जोड़कर चार हजार एक सौ एक रुपए बाद में देने का वायदा किया तब

जाकर बारात विदा हुई ।

बताया जाता है कि ससुराल में लड़की को रोज ही कम दहेज मिलने के लिए तंग किया जाता था । उसका पति किशनलाल अपने मां बाप के सामने ही अपनी पत्नी को बुरी तरह मारता पीटता और सुलोचना के सास ससुर यह चुपचाप देखते रहते । एक बार उन लोगो ने उसे घर से भी निकाल दिया, पर पड़ौसियों द्वारा समझाने बुझाने पर उसे फिर रख लिया । लेकिन कुछ दिनों बाद ही उसकी ससुराल वालों ने उसे खूब मारा पीटा और रात के समय ही घर से बाहर निकाल दिया । सुलोचना उस समय गर्भवती थी । वह रात भर बाहर पड़ी रही और किसी तरह दूसरे दिन अपने पीहर पहुंची । लड़की के बाप ने उसके सास ससुर से बड़ी मिन्नतें कीं और तब वे लड़की को दूसरी बार फिर से रखने के लिए राजी हो गए ।

इसके बाद बताया जाता है कि ११ सितंबर १९७६ को लड़की के पति और सास ने फिर उसे बुरी तरह मारा तथा उसके सारे जेवर उतार लिए गए । उसी रात लगभग डेढ़ बजे वह सो रही थी तो उसके पति, सास, ससुर और देवर चारों ने मिलकर उस पर मिट्टी का तेल डालकर आग लगा दी । उसकी चीख सुनकर पड़ौसी जागे और घटनास्थल पर पहुंचे । उस समय तो आग बुझा दी गई और लड़की को अस्पताल पहुंचाया गया, परंतु अस्पताल में कई महीने तक तड़पने के बाद उसने दम तोड़ दिया ।

विवाह में कम दहेज लाने के कारण यह आशा की जाती है कि स्त्री अपने मायके से और धन लाए । मुंह मांगी रकम न मिलने के कारण किसी बहू को किस प्रकार सताया जाता है और ससुराल वाले उसकी जान के ग्राहक किस प्रकार बन जाते हैं यह उपरोक्त घटना में देखा गया । परंतु कई बार मात्र इसी कारण वर्तमान पत्नी से छुटकारा पाकर नया ब्याह रचाने तथा दूसरी शादी कर दहेज में फिर से मोटी रकम पाने के दुःस्वप्न भी देखे जाते हैं । यहां तक कि पहली पत्नी की हत्या कर देने में भी कोई झिझक नहीं होती । गंगानगर में ही इसी तरह की एक

घटना अब से कुछ समय पूर्व घटी बताते हैं कि रेशमा रानी नाम की लड़की का विवाह एक अच्छे परिवार में संपन्न हुआ था । वह स्वयं भी खाते पीते परिवार में पली बढ़ी थी और विवाह के समय वरपक्ष द्वारा उसके मातापिता से दहेज में ढेरों साज सामान के साथ साथ स्कूटर भी मांगा गया । दहेज में पहले ही इतना कुछ दिया जा चुका था कि उसके बाद कुछ और देने से परिवार पर असह्य आर्थिक दबाव पड़ता था । फिर भी वह कन्या पक्ष अपना वायदा पूरा करने के लिए जी तोड़ कोशिश करता रहा । वायदा पूरा होने में देरी होते देख ससुराल पक्ष वालों ने यह समझ लिया कि रेशमा के माता पिता स्कूटर नहीं देना चाहते । इसी से उन्होंने रेशमा को जिन्दा जला दिया । बताया जाता है कि इस हत्या के पीछे दूसरा विवाह कर मोटी रकम प्राप्त करना ही एक मात्र उद्देश्य न था । गृहिणियों की हत्या का उद्देश्य चाहे पर्याप्त दहेज न मिलना रहा हो अथवा बाद में मायके से अपने पति की मांगें पूरी न कर पाना रहा हो, गृहणी द्वारा पति के व्यक्तिगत जीवन में उचित किंतु अनपेक्षित हस्तक्षेप करना रहा हो अथवा पत्नी का असुन्दर होना और उसकी चमड़ी का सांवलापन रहा हो । कारण चाहे जो भी रहा हो परंतु उपरोक्त घटनाएं हमारे समाज में नारी की स्थिति का चित्रण करने में पूरी तरह सटीक और प्रतिनिधि घटनाएं हैं ।

समाचार पत्रों में आए दिन छपने वाले ऐसे समाचारों पर एक निगाह दौड़ाई जाए, जिनमें छोटे छोटे कारणों को लेकर नारी का उत्पीड़न किया गया हो तो पता चलेगा कि उसकी हमारे समाज में क्या स्थिति है । स्थिति का अच्छा या बुरा होना तो दूर उसे हर घड़ी सन्देह तथा अविश्वास की दृष्टि से देखा जाता है । वातावरण और संसर्ग दोष से कितने ही व्यक्ति पथ भ्रष्ट हो जातें हैं । यह भी एक तथ्य है कि नारी की अपेक्षा पुरुष ही अधिक पथ भ्रष्ट होते हैं और दांपत्य जीवन की एक निष्ठा मर्यादा को तोड़कर उच्छृंखल स्वतंत्र आचरण करते हैं । पुरुषों में जितनी कामुकता और लंपटता देखने को मिलती है उसका तो एक अंश भी नारी में शायद ही कहीं देखने को मिले । फिर भी नारी को सदैव शंका और अविश्वास

की दृष्टि से देखा जाता है ।

पर्दा प्रथा, घर तक ही सीमित रहने के प्रतिबंध और लोक लाज की तथाकथित मर्यादाएं नारी के लिए ही बनीं । इसका कारण यह था कि उस पर अविश्वास किया जाता रहा । बेचारी नारी ने इन प्रतिबंधों को मर्यादा मानकर सहज रूप से स्वीकार भी कर लिया फिर भी उस पर सन्देह रखना बंद नहीं किया गया । आए दिन समाचार पत्रों में ऐसी घटनाएं प्रकाशित होती रहती हैं जिनमें आनुमानिक संदेह के कारण ही किसी को घर से बाहर निकाल दिया गया, अथवा उसका बुरी तरह उत्पीड़न किया गया । यहां तक कि उसे जान तक से मार डालने के समाचार भी प्रकाश में आते रहते हैं ।

अभी कुछ महीनों पूर्व नव भारत टाइम्स में छपे एक समाचार के अनुसार अपनी पत्नी के चाल चलन पर संदेह करने के कारण सीलमपुर (नयी दिल्ली) के रघुवीर नामक एक युवक ने उसे विष देकर मार डाला । रघुवीर ने अपनी पत्नी संतोष को दरियागंज ले जाकर वहां विषपान कराया । विष उसे धोखे से खिलाया गया था और जब संतोष के प्राण पखेरू उड़ गए तो उसके शव को स्कूटर पर लाद कर रघुवीर निजामुद्दीन इलाके के रिजरोड पर लाया और सड़क के किनारे मिट्टी में दबा दिया । पत्नी की हत्या करने और उसका शव दबा देने के बाद उसकी आत्मा कचोटने लगी और वह विक्षिप्त का होकर निरुद्देश्य ही सड़क पर घूमने लगा । पुलिस के एक सिपाही को शक हुआ तो उसने टोका, इस पर रघुवीर हड़बड़ा उठा । पुलिस के सिपाही को संदेश हुआ तो उसने जोर देकर पूछा । अंततः रघुवीर ने अपना अपराध उगल दिया और कहा कि उसे संतोष के चालचलन पर सन्देह था ।

चरित्र पर संदेह को लेकर पत्नी का उत्पीड़न करने, उसे यातनाएं देने की घटनाएं तो इतनी हैं कि लगता है पुरुष चारित्रिक संदेह का तो केवल बहाना भर बनाते हैं अन्यथा स्त्री को प्रताड़ित करना, उसे यातनाएं देना, कष्ट पहुंचाना जैसे उसके स्वभाव के ही अंग हैं अन्यथा परिवारों में, छोटी छोटी बातों को लेकर कलहपूर्ण वातावरण नहीं बना रहता ।

बाहर से कोई अपने पारिवारिक जीवन में कितना ही सुखी संतुष्ट क्यों न दिखाई दे, परंतु औसत परिवारों में जिस प्रकार का वातावरण रहता है, उसमें असंतोष ही झलकता है । यदि ऐसा न रहा होता तो परिवारों में स्वर्ग का सा वातावरण, सुख संतोष छाया रहता । परिवार के वातावरण में क्लेश कलह का विष घोलने के लिए भी अधिकांशतः पुरुष ही जिम्मेदार है । सब्जी में नमक कम है, दाल कच्ची रह गई है, कुर्ते के बटन टूटे हुए हैं, बच्चे धूल मिट्टी में खेल रहे हैं जैसी छोटी छोटी बातों को लेकर पति अपनी पत्नी पर जिस तरह बरस पड़ता है उससे लगता है कि पत्नी पुरुष की जीवन संगिनी, अभिन्न सहचरी नहीं, उसकी खरीदी हुई दासी और गुलाम है ।

कई बार तो स्थिति ऐसी बन जाती है कि स्वभाव से संवेदनशील महिलाएं उन्हें सहन नहीं कर पातीं और अंदर ही अंदर टूट जाती हैं । परिवार के सभी सदस्यों को संतुष्ट रखने का गंभीर दायित्व और फिर ऊपर से ताने उलाहने भरा पति का व्यवहार उसके व्यक्तित्व को ही खोखला कर देता है । इन सब बोझों से लदी, असामान्य रूप से थकी हुई, चिड़चिड़ी उदास और निराश स्त्रियों की एक बड़ी संख्या है । इन असह्य परिस्थितियों में कई बार तो स्त्रियां आत्म हत्या तक कर लेती हैं ।

थाना बारहदरी (बरेली) के हजियापुर क्षेत्र के श्री नत्थूलाल की पत्नी श्रीमती जमुना ने रात के समय जबकि घर के सब लोग सो रहे थे तब अपने शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क लिया और कपड़ों में आग लगाकर आत्महत्या कर ली । जमुना ने आत्महत्या क्यों की इसका तो कुछ पता नहीं चल सका है किंतु कुछ दिनों से पति पत्नी में काफी झगड़ा होता रहता था और पति उसके साथ मारपीट भी कर बैठता था ।

गृह कलह और मनमुटाव के कारण भी स्त्रियों की हत्या कर दी जाती है । कुछ समय पूर्व मथुरा के जिला एवं सत्र न्यायाधीश श्री विक्रम सिंह ने मोहल्ला कठोटी कुआं के कारे नामक व्यक्ति को उसकी पत्नी रामश्री की हत्या के आरोप में आजन्म कठिन कारावास के दण्ड का आदेश दिया था । अभियोग के अनुसार कारे ने २२–२३ अक्टूबर

७२ की रात को लगभग सवा बारह बजे अपनी पत्नी को एक कोठरी में बंद कर ईंटों से मार मार कर हत्या कर दी । वह बेचारी चीखती रही और तड़पती रही । लोगों ने दरवाजा खुलवा कर रामश्री को बचाने के भरसक प्रयास किए किंतु कारे ने रामश्री को प्राणहत कर ही दम लिया, फिर भी उसने दरवाजा नहीं खोला । अंततः कोतवाली पुलिस ने कोठरी के जंगले तोड़कर कारे को रंगे हाथों गिरफ्तार कर लिया ।

छोटी छोटी बातों को लेकर नारी पर कितने नृशंस अत्याचार किए जा सकते हैं–इसकी छोटी सी झांकी ऊपर की पंक्तियों में दिखाई देती है । किसी विचारक ने भारत में नारियों की स्थिति का विश्लेषण करते हुए बड़े ही मार्मिक स्वरों में पूछा था–"क्या कारण है कि रसोईघर में होने वाली दुर्घटनाएं हों अथवा घर से बाहर होने वाली हत्या या आत्म हत्याओं में स्त्रियां ही इनका शिकार क्यों होती हैं ।"

उत्तर एक ही है कि नारियों पर जरा जरा सी बातों के लिए झूठे और नृशंस जुल्म ढाए जाते हैं, उन्हें सताया जाता है । अपने देश में प्रचलित विवाह परंपराओं को ही लें । किसी ने ठीक ही कहा है कि भारत में लड़कियों के साथ नहीं, लड़कियों के माता पिता से मिलने वाले उपहार, दहेज से ही विवाह किया जाता है । भारतीय पुरुष अपनी जीवन संगिनी से भी अधिक उसके द्वारा लाए जाने वाले उपहारों को अधिक महत्व देते हैं । तभी तो अधिक दहेज न मिलने के कारण, कम दहेज लाने के कारण भारतीय गृहणियों को बुरी तरह सताया जाता है । कुछ दिनों पूर्व की ही घटना है जब मुजफ्फर नगर की एक विवाहिता लड़की की दिल्ली में संदेहास्पद स्थिति में मृत्यु हुई । इस लड़की का विवाह एक वर्ष पूर्व दिल्ली के ही एक इंजीनियर कालेज के प्राध्यापक से हुआ था ।

अपनी बेटी की आकस्मिक मृत्यु की सूचना पाकर लड़की के पिता ने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराई और यह आरोप लगाया कि उसकी धेवती का जन्म होने के पश्चात् ससुराल वालों ने लड़की पर इस कारण

अत्याचार किया कि उसके पिता ने जन्म होने पर अधिक सामान क्यों नहीं भेजा था । लड़की के पिता ने यह भी आरोप लगाया कि उसकी लड़की को इस कारण काफी सताया गया और उसके कपड़ों पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी गई तथा उसे जल जाने के बाद अस्पताल भेजा गया जहां तड़प तड़प कर उसने दम तोड़ दिया । लड़की के पिता को इसकी कोई सूचना नहीं दी गई ।

अपनी पुत्री की इस प्रकार हुई मृत्यु से दुखी पिता ने यह भी आरोप लगाया कि उसका दामाद सौ पचास रुपयों के लिए भी उसे सताता रहता था जबकि उनकी लड़की एम. ए. पास भी और बहुत सुन्दर तथा सुशील थी तथा उसने अपनी बेटी के विवाह में भी काफी पैसा खर्च किया था । कहा जाता है कि इस लड़की के पति ने कई बार उसे मार डालने की भी धमकी दी थी इस आशय के पत्र पुलिस अधीक्षक को दिखलाए गए हैं । उक्त प्राध्यापक के बड़े भाई के बारे में भी ऐसा ही समाचार मिला है कि उसने भी अपनी पहली पत्नी को छोड़कर जिसके दो बच्चे हो गए थे, दूसरा विवाह कर लिया है । कहा जाता है कि यह प्राध्यापक भी पुनः विवाह कर ४०–५० हजार रुपए प्राप्त करने का इच्छुक था ।

नई पीढ़ियां माता के पेट से ही पैदा होती हैं, घर परिवार का वातावरण महिलाएं ही बनाती हैं, संस्कार, स्वभाव और चरित्र का प्रशिक्षण घर की पाठशाला में ही होता है, परिवार का स्नेह सौजन्य पूरी तरह स्त्रियों के हाथ में रहता है । यदि नारी की स्थिति सुसंस्कृत सुविकसित स्तर की हो तो निःसंदेह हमारे घर परिवार स्वर्गीय वातावरण से भरे पूरे रह सकते हैं, उसमें रहने वाले लोग कल्पवृक्ष जैसी शीतल छाया का रसास्वादन कर सकते हैं । हीरे जैसे बहुमूल्य रत्न किन्हीं विशेष खदानों से निकलते हैं, पर यदि परिवार का वातावरण परिष्कृत हो तो उसमें से एक से एक बहुमूल्य नवरत्न निकलते रह सकते हैं और उस संपदा से कोई देश, समाज, समुन्नत स्थिति में बना रह सकता है । देश की आधी जनसंख्या नारी है, यदि वह पक्ष दुर्बल

और भारभूत बनकर रहेगा तो नर के रूप में शेष आधी आबादी की अपनी भारी शक्ति उस अशक्त पक्ष का भार ढोने में ही नष्ट होती रहेगी । प्रगति तो तभी संभव थी जब गाड़ी के दोनों पहिए साथ साथ आगे की ओर लुढ़कते । एक पहिया पीछे की ओर खिंचे दूसरा आगे की ओर बढ़े तो उससे खींचतान भर होती रहेगी हाथ कुछ नहीं लगेगा । प्रगतिशील देशों में नारी भी नर के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ने की, अपने देश को आगे बढ़ाने की सुविकसित स्थिति में रहती है । फलस्वरूप वे बहुत कुछ कर गुजरते हैं, पर हमारी प्रतिगामी परिस्थितियों तो वैसा कुछ बन पड़ने का अवसर ही नहीं आने देतीं । जब तक यह स्थिति बनी रहेगी, मात्र पुरुषों को विकसित बनाने वाले सारे प्रयास अधूरे और असफल ही सिद्ध होते रहेंगे । यदि हमें सचमुच ही प्रगति की दिशा में आगे बढ़ना हो तो नारी को साथ लेकर ही चलना होगा । एकांगी कभी भी सफल न हो सकेंगे ।

नारी जागरण भारत की सबसे प्रथम और सबसे प्रमुख आवश्यकता है । इसकी पूर्ति के लिए विशालकाय और दूरगामी कार्यक्रम बनाने पड़ेंगे । सरकारी स्कूलों में कन्या शिक्षा का प्रयास चल रहा है, महिला कल्याण के लिए भी सरकारी प्रयत्न हो रहे हैं, आंसू पोंछने की दृष्टि से और आशा का दीपक संजोए रहने की दृष्टि से उनका भी कुछ न कुछ उपयोग है ही पर बात उतने भर से बनेगी नहीं, हमें नारी जागरण का समय राष्ट्र को प्रभावित करने वाला–रचनात्मक कदम बढ़ाना पड़ेगा अन्यथा आधे राष्ट्र की सर्वतोमुखी प्रगति का अत्यंत जटिल, अतीव विस्तृत और अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न हजार वर्षों में भी हल न हो सकेगा । इसके लिए गैर सरकारी प्रयत्न ही प्रधान भूमिका संपन्न कर सकते हैं ।

विषमता की यह विकृति अब समाप्त होनी चाहिए

भारतीय महिलाओं का एक विराट् रूप है और उसके अंदर अनेक विषमताएं भरी हुई हैं । इस देश में जो कुछ एक महिला को सुलभ है, उसकी झलक दूसरे वर्ग की महिला को सुलभ भी नहीं होती ।

महिलाओं का एक बड़ा वर्ग सड़क पर मेहनत मजदूरी कर अपना जीवन गुजार लेता है । उनके बच्चे किसी वृक्ष की छाया में धरती मां की गोद में बड़े होते हैं । वे सुबह से शाम तक जीविकोपार्जन करने में लगी रहती हैं । भारत के वे फूल खिलने से पहले ही मुरझा जाते हैं । उन्हें कहां फुर्सत कि वे उनके स्वास्थ्य पर ध्यान दे सकें । स्वास्थ्य के नियमों का जानना तो दूर रहा, वे यह भी नहीं जानतीं कि मक्खी व मच्छरों से उनको क्या हानि होती है ।

उनको तुम्हारी दुनियां से कोई मतलब नहीं, चाहे आबादी इससे चौगुनी हो जाए । एक बार महिला से पूछा गया कि आपके कितने बच्चे हैं ? उसने कहा–९ बच्चे हैं और १०वां होने वाला है । उस पढ़ी लिखी महिला ने उसके सामने आबादी बढ़ने तथा भारत की गरीबी का चित्र खींचा । उसको परिवार नियोजन केन्द्र द्वारा बच्चे बंद करने के उपाय भी समझाए गए, लेकिन उसे यह सब सुनकर आश्चर्य हुआ । इन सबसे वे पूर्ण अनभिज्ञ पाई गई । उन्होंने कहा–हमारा हर बच्चा काम करता है, हमें तो हाथों की आवश्यकता है । उनका कर्तव्य केवल बच्चों को जन्म देने तक ही सीमित होकर रह गया है ।

इस प्रकार उसका जीवन स्वाभाविक ढंग से बीत जाता है । उन्हें शायद कभी कोई तकलीफ ही महसूस नहीं होती और न शायद यह अहसास होता है कि उनके जीवन में आधुनिक जीवन के साधनों का कितना अभाव है ?

दूसरी तरफ गांवों में कुछ संपन्न घर की महिलाएं भी होती हैं, जो

पढ़ी लिखी तो नहीं होतीं लेकिन पहनने ओढ़ने के ढंग से आप अनुमान लगा सकते हैं कि वे आधुनिक बहिरंग रूप से परिचित हो चुकी हैं । यदि उनके गांव में कभी कोई पढ़ी लिखी महिला सभा आदि का आयोजन करें तो वे अच्छे कपड़े पहनकर, पाउडर आदि लगाकर ही पहुंचेंगी । यह जागरूकता बहुत ही कम है और वह भी संतोषप्रद नहीं ।

यह तो हुआ ग्रामीण दृश्य, शहरों में हमें दूसरी तरह की झांकी देखने को मिलती है । शहर के संपन्न परिवारों के अतिरिक्त मध्यम वर्ग या निम्न मध्यम के परिवारों में जागृति अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी में दिखलाई देती है । वे अपने बच्चे को शाला तथा पति को कार्य पर भेजने के बाद शीघ्रता से घर के काम काज समेट कर, मुस्तैदी से बाहर के काम कर अपने पति को मदद देती हैं ।

इसके अतिरिक्त युवा पीढ़ी की जागरुकता शिक्षा के विकास के साथ साथ बढ़ रही है । हजारों की संख्या में कालेज जाने वाली छात्राओं को यह अहसास तो अवश्य होता है कि दुनिया कैसी है, देश कैसा है, क्या बन रहा है और क्या बनेगा ? लेकिन उसके बनाने में यह युवा पीढ़ी कितना योगदान कर सकती है, इससे वे अनभिज्ञ है । वे आधुनिकता का नकली मुखौटा पहिने हुए है । स्वाधीन भारत की सच्ची नारी के रूप से वे कोसों दूर हैं । इनका अंतरंग, उन दैवी गुणों से जिन्हें हम शालीनता, शिष्टता, नम्रता, कर्तव्य–निष्ठा के नाम से पुकारते हैं, बिल्कुल ही रिक्त है । इनकी शिक्षा केवल अक्षर–ज्ञान पर टिकी हुई है । अतः वे कर्तव्यों से शून्य जीवन जीने की आदी होती जा रही हैं । उनका दृष्टिकोण व्यक्तिवादी ही बनता जा रहा है । उनकी दुनिया परिवार तक ही सीमित रहकर छोटी होती जा रही है यह देश के लिए घातक सिद्ध हो सकती है ।

अब अन्य उच्च पदों पर कार्य करने वाली महिलाओं पर भी दृष्टि डालें । एक विशिष्ट व्यक्तित्व की महिला इस प्रजातंत्र देश की प्रधानमंत्री है । श्रीमती भण्डारनायके के बाद विश्व के प्रजातांत्रिक इतिहास में श्रीमती इन्दिरागांधी दूसरी महिला है, जिन्हें प्रधानमंत्री का पद प्राप्त हुआ । कई महिलाएं संसद के वरिष्ठ पदों पर हैं, कई हाईकोर्ट की जज, बड़ी बड़ी

वकील, बैरिस्टर महिलाएं राजदूत आदि हैं लेकिन भारत जैसे विशाल देश में ऐसी महिलाएं नगण्य के बराबर ही हैं ।

इसका अर्थ यह हुआ कि देश स्वतंत्र हुआ । स्वतंत्रता की ज्योति का प्रकाश भी बिखरा पर उस प्रकाश ने सबको बराबर रोशनी नहीं दी ।

अंत में भारत की उन महिलाओं का वर्ग भी आता है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी के संस्कारों में जकड़ी हुई हैं । वे आधुनिक युग से बहुत दूर हैं । वे अपनी रूढ़िवादिताओं को छोड़ने को किसी मूल्य पर भी तैयार नहीं, इसीलिए जो बच्चे आधुनिक शिक्षा पा रहे हैं, उनके बीच और उनकी पहिले की पीढ़ी में बड़ा अंतर होता जा रहा है । मां और बेटी में अंदर ही अंदर अलगाव बढ़ता जा रहा है । बेटी अपनी मां के साथ उस तरह का संबंध चाह कर भी स्थापित नहीं कर पाती, जिसमें एकत्व हो । इसका मुख्य कारण यह है कि एक ओर जहां लड़कियों को शिक्षा दी जा रही है, उनके मातापिता को शिक्षित बनाने का इंतजाम नहीं किया जा रहा है ।

इतनी विषमताएं अन्य देशों की नारियों में नहीं पाई जाती हैं । लेकिन भारत में यह परिवर्तन का चक घूम रहा है । इन विषमताओं के मिटाने का आधार, सही शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार ही हो सकता है । इसलिए हमें शिक्षा का रूप बदलना पड़ेगा । शिक्षा ऐसी हो, जो भारतीय नारी के अंतरंग को आलोकित कर सके, उसमें उसके दैवी गुणों को विकसित कर सके । वे अपने ज्ञान के प्रकाश को केवल भारतीय नारियों में ही नहीं, विश्व की नारियों में बिखेर दें ।

इससे भारत में ही नहीं, विश्व में भी सुख व शांति का साम्राज्य फैल जाएगा ।

अस्तु अवगति के कारणों पर विचार करते हैं तो उनमें सबसे अधिक भयावह भूल यह प्रतीत होती है कि अपनी ही कुल्हाड़ी से अपना ही आधा अंग क्षत विक्षत करके रख दिया । आधी शक्ति नर की और आधी नारी की है । आधी शक्ति को असमर्थ बना दिया जाए तो शेष आधी को ही शेष सारा भार वहन करना पड़ेगा । अक्षम न होने पर आधी शक्ति जो काम कर सकती थी, उससे वंचित रहना पड़ेगा । समुन्नत नारी कंधे से

कंधा मिलाकर काम करती–पैर से पैर मिलाकर चलती तो प्रगति की मंजिल कितनी आसान रहती ।

हमारी भूलों में यह सबसे अग्रणी, सबसे भारी और सबसे अधिक दुखदायी है कि नारी को ऐसे बंधनों में बांधने की चेष्टा की गई जो मनुष्य के मौलिक अधिकारों का अपहरण और हनन करते हैं । अपने साथ अनीति बरतना प्रकारांतर से आत्महत्या ही है । नारी और नर दो वर्ग–दो पक्ष नहीं हैं, एक ही चेतना के, एक ही सत्ता के दो अविच्छिन्न पहलू हैं, दोनों को समान रूप से विकसित होने देना ही श्रेयस्कर है । न मालिकी श्रेयस्कर है न गुलामी हितकर है । यह सहकारिता का युग है । इसमें सहयोग की गरिमा एक स्वर से स्वीकार कर ली गई है और यह समझ लिया गया है कि सहयोग स्वेच्छा से ही हो सकता है ।

समुन्नत देशों में जहां भी नारी को मनुष्योचित अधिकार मिले हैं, वहीं वह पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है, किंतु भारत में नारी समाज आज भी नितांत पिछड़ी हुई स्थिति में पड़ा है । पिछड़ी हुई नारी, नर के लिए किसी भी क्षेत्र में सहायक न हो सकेगी । भारत में यह प्रयोग दीर्घकाल तक हो चुका और वह सर्वथा हानिकारक सिद्ध हुआ, अब उस प्रचलन को बनाए रखने में कोई बुद्धिमानी नहीं है ।

यूगोस्लेविया की महिलाएं उस देश की पूरी कृषि व्यवस्था संभालती हैं । पुरुष फौज, पुलिस, दफ्तर, कारखाने संभालते हैं । कृषि, पशुपालन में उन्हें कोई श्रम या हस्तक्षेप नहीं करना पड़ता । चीन, रूस आदि श्रमनिष्ठ देशों में जाकर देखा जाए तो पता चलेगा कि पारिवारिक और राष्ट्रीय संपदा, सुरक्षा और सुख सुविधा बढ़ाने में वे कितना बड़ा योगदान दे रही हैं । रूस की शिक्षा व्यवस्था का अधिकांश उत्तरदायित्व महिलाएं ही वहन करती हैं । शिक्षा संस्थाओं में पुरुषों की संख्या बहुत ही कम दिखाई पड़ेगी । अस्पतालों एवं स्वास्थ्य संस्थाओं का उत्तरदायित्व भी प्रायः उन्हीं का है । डाक्टर, कम्पाउण्डर, नर्स आदि का कार्य करती हुई महिलाएं ही देखी जाएंगी, पुरुष तो, जहां तहां ही दृष्टिगोचर होंगे ।

जापान की महिलाएं उद्योग धंधे के विकास में पुरुषों के कंधे से कंधा

मिलाकर काम करती हैं । घर में लगे छोटे कुटीर उद्योगों में संलग्न रहकर वे अपने समय का उपयोग घर परिवार को और समूचे राष्ट्र को संपन्न बनाने में करती हैं । जर्मनी में कल कारखानों को संभालने में महिलाएं पुरुष इंजीनियरों, कारीगरों एवं व्यवस्थापकों से घटिया नहीं बढ़िया ही सिद्ध होती हैं । इंग्लैण्ड, फ्रांस, कनाडा, अमेरिका में दुकानें चलाने में महिलाओं की प्रमुखता है ।

नारी को विश्वस्त, मित्र और सम्मानास्पद स्वजन का स्थान मिलना चाहिए । उसे प्रताड़ित, पददलित रखने में नहीं, सघन सहयोगी बनाने में लाभ समझा जाना चाहिए । उदारता के बीज बोकर नारी की सत्ता धरती की, माता के प्रतिपादनों की, अपेक्षा कम नहीं कुछ अधिक ही पाने की आशा की जानी चाहिए । यही नीति श्रेयस्कर है । लाखों वर्षों तक इस नीति पर चलकर भारत ने बहुत कुछ पाया था ।

गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका में गोरे और काले रंग वालों के बीच बरते जाने वाले भेदभाव के विरुद्ध जब आंदोलन किया था तो उन्हें यह कहकर चिढ़ाया जाता था कि "पहिले अपने देश में अछूतों और स्त्रियों के साथ बरते जाने वाले भेदभाव को दूर कराइए तब गोरे और काले का अंतर मिटाने का प्रयास करना ।" वस्तुतः हम जब भी जहां भी मनुष्य के साथ बरती जाने वाली अनीति के विरुद्ध आवाज उठाते हैं तो विपक्षी लोग तत्काल गाल पर करारा तमाचा जड़ देते हैं और कहते हैं–"निर्लज्ज लोगो अपने घर को सुधारो, अछूतों और स्त्रियों के साथ तुम लोग क्या कर रहे हो, उसे देखो और समानता के सिद्धांत की दुहाई देते हुए शर्म करो । " वस्तुतः हम इस योग्य हैं नहीं कि मनुष्य द्वारा मनुष्य के साथ बरती जाने वाली अनीति का साहसपूर्वक विरोध कर सकें । आदर्श और व्यवहार में इतना अंतर बरतने वाले लोग ढोंगी ही कहे जा सकते हैं । दुनिया हमें इसी दृष्टि से देखती है और अपने द्वारा उठाई गई न्याय की मांग सर्वथा उपहासास्पद बन जाती है । इस स्थिति को सुधारे बिना हम मानवी न्याय का समर्थन करने में, उसे प्राप्त करने के लिए कुछ योगदान दे सकने में असमर्थ ही रहेंगे ।

जनसंख्या में आधे नर होते हैं और आधी नारी । उन्हें शिक्षा एवं स्वावलंबन के अभाव में पर्दा प्रथा, अनुभव हीनता एवं सामाजिक कुरीतियों ने बेतरह जकड़ रखा है । वे घर के कैदखानों में बंदी रहकर रोटी बनाने, चौकीदारी करने एवं बच्चे जनने का काम कर रही हैं । ये काम भी वे अपने पिछड़ेपन के कारण ठीक तरह कर नहीं पातीं, स्वास्थ्य और आहार का संतुलन मिल सकना, व्यवस्था बुद्धि के अभाव में गृह व्यवस्था, सज्जा एवं सुरक्षा की दृष्टि से भी आधा अधूरा काम कर पाती हैं । आवश्यक जानकारी एवं शारीरिक, मानसिक स्थिति की दुर्बलता के कारण उनके लिए स्वस्थ, समुन्नत एवं सुसंस्कारी संतानें प्रस्तुत कर सकना भी कठिन है । पिछड़ापन किसी को भी कुछ करने नहीं देता फिर भारतीय नारी भी यदि अपने थोड़े से उत्तरदायित्वों को भी ठीक तरह न निभा सके तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ?

मनुष्य द्वारा मनुष्य की प्रताड़ना नितांत पाशविक है । सभ्य देशों की अदालतों से कोड़े मारने का दण्ड उठा दिया गया है । छोटे बच्चों को मारना अध्यापकों के लिए अपराध है । पशुओं की प्रताड़ना भी अब दण्डनीय अपराध की धाराओं में गिन ली गई है । पशुबध अपराध नहीं है पर उनके साथ क्रूरता का व्यवहार करना कानून का उल्लंघन है । किसी जमाने में बड़े बूढ़े लोग वयस्क लड़कों को भी मारपीट लिया करते थे, अब अन्यान्य वृद्धियों के साथ स्वाभिमान भी बढ़ा है । जवान लड़के यह पसंद नहीं करते कि बड़े बूढ़े उनके साथ गाली गलौज या मारपीट करें, जहां ऐसे प्रसंग आते हैं, वहां विद्रोह खड़ा हो जाता है और अवांछनीय घटनाएं घटित हो जाती हैं । मानवी स्वाभिमान एक तथ्य है, उसे सुरक्षित रखा ही जाना चाहिए ।

मानसिक स्वास्थ्य, सुशिक्षा से, सुसंस्कारी वातावरण से और ज्ञान अनुभव संचय करने की परिस्थितियों से बनता है, वैसी परिस्थितियां कहां हैं ? जन्म से मरण पर्यन्त एक छोटे से पिंजड़े में घुटते रहना पड़े और शिक्षा की प्रकाश किरणें समीप तक न पहुंचें तो समाज संसार से पूरी तरह कटी हुई नारी का बौद्धिक विकास कैसे संभव होगा ? भावना पर खराद

चढ़ाने वाली संगीत साहित्य कला का जिसे दर्शन तक नहीं होता उससे उदात्त और परिष्कृत भावनाओं की आशा करना व्यर्थ है । जन्मजात रूप से मनुष्य एक अविकसित पशु मात्र है । उसका विकास तो प्रगति की परिस्थितियां करती हैं । वह स्रोत सूख जाए तो यह किसी प्रकार संभव नहीं कि कोई अपने व्यक्तित्व का प्रखर निर्माण कर सके । यह स्वीकार करते हुए मर्मांतक पीड़ा होती है कि भारतीय नारी शारीरिक और मानसिक द्वोनों ही दृष्टि से अस्वस्थ और जर्जर हो चली है ।

इस पीड़ित नारी से नर को क्या लाभ मिला ? उसे असहाय बनाकर किसने क्या पाया ? घर परिवार के लोगों की इससे क्या सुविधा बढ़ी ? पति को उससे क्या सहयोग मिला ? बच्चे क्या अनुदान पा सके ? देश की अर्थ व्यवस्था और प्रगति में पिछड़ी नारी ने क्या योगदान दिया ? समाज को समुन्नत बनाने में वह क्या योगदान दे सकी ? स्वयं नारी, जीवन का क्या सौभाग्य पा सकी ? इन प्रश्नों पर विचार करने से लगता है, नारी को पीड़ित, पददलित, प्रतिबंधित, उपेक्षित रखा जाना किसी प्रकार उचित नहीं हुआ । समय पूछता है कि ऐसी नारी को कब तक सहन किया जाएगा और कब तक उसे इसी तरह चलने दिया जाएगा ।

नारी की वर्तमान स्थिति बदलनी होगी

प्रसिद्ध इतिहासज्ञ कार्लाइल ने कहा है–''मनुष्य की बुद्धिमत्ता इस बात में है कि वह अपनी पिछली गल्तियों को न दुहराए । किसी जाति के विकास का भी यही आधार है । इतिहास का सबसे बड़ा लाभ यही है कि वह किसी जाति की पिछली गल्तियों का लेखा जोखा प्रस्तुत करता है और उन आधारों को भी दर्शाता है जो उसके विकास में सहायक होते हैं । इसलिए प्रत्येक विकासशील जाति अपने इतिहास से सीख लेकर ही आगे बढ़ सकती है ।'' कार्लाइल का यह प्रतिपादन पूर्णतः सटीक है और इसकी पुष्टि के लिए हम यदि इतिहास का अध्ययन करें तो प्रतीत होगा कि जब

जब किसी समाज ने अपनी पिछली भूलें दुहराई हैं, तब तब उन्हीं विफलताओं और परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है । भारतीय इतिहास में ही विदेशी आक्रमणकारियों ने जब जब आक्रमण किए तब तब एक ही कारण से हमें उनके सामने घुटने टेकने पड़े । वह कारण था– आपसी फूट । लगातार डेढ़ हजार वर्ष तक विदेशी आहान्ताओं से हम पददलित होते रहे हैं, इसका एक मात्र यही कारण रहा है कि हम शौर्य, साहस, पराक्रम और वीरता में किसी से कम न होते हुए भी आपसी तालमेल और सामंजस्य स्थापित नहीं कर सके ।

बड़ी कीमत चुकाकर हमने अपनी इस भूल को समझा और स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात उस त्रुटि को सुधारने के लिए यथा संभव प्रयत्न करते रहे हैं । किंतु इससे भी भयंकर एक और भूल हमसे होती रही है जिसकी ओर हमने अभी ध्यान नहीं दिया है । यह है नारी की, मात्र शक्ति की उपेक्षा, अवहेलना । उपेक्षा ही नहीं उसका पददलन, शोषण और उस पर दुर्भावनापूर्ण आक्षेपों, धारणाओं, मान्यताओं तथा प्रतिबंधों का आरोपण । इस भूल ने भारतीय समाज को बड़ी बुरी तरह क्षति पहुंचाई है । दुनिया के कई देश जो भारत के साथ ही स्वतंत्र हुए थे या उसके दो चार वर्ष आगे पीछे उन्हें स्वतंत्रता मिली थी आज भारत से कई क्षेत्रों में आगे हैं, जब कि हम लोग अभी तक अपनी दिशा ही स्थिर नहीं कर पाए है कि हमें किस दिशा में और किस क्षेत्र में आगे बढ़ना है ।

अस्तित्व बोध–जो किसी भी व्यक्ति या समाज के लिए प्रगति बाधा का पहला चरण है, उसके जन्म उत्सव से ही आरंभ होता है और मनुष्य तथा मनुष्यता के जन्म का उत्सव है–नारी । उसे मनुष्य और मनुष्यता की जननी होने के कारण ही मनीषियों ने उसे मातृशक्ति कह कर सम्मानित संबोधित किया है । इतिहास इस बात का साक्षी है कि अतीत काल में जब तक भारतीय समाज ने नारी को मातृशक्ति के पद पर प्रतिष्ठित रखा तब तक उसने ऐसे ऐसे श्रेष्ठ मानव रत्न समाज को दिए और अपने समय को इतिहास के पन्नों पर स्वर्ण युग के रूप में अंकित किया । जब जब उसे गृहलक्ष्मी, कुलमाता, परिवार की स्वामिनी और समाज की माता कहा जाता

रहा है तब तब भारतीय समाज विश्व रंगमंच पर प्रमुख और मार्गदर्शक भूमिका निभाता रहा ।

उस घड़ी को दुर्भाग्य कहें या हमारी मूर्खता जब लोगों ने स्त्री को गृहलक्ष्मी की गौरवगरिमा से वंचित कर उसे घर आंगन की शोभा बनाकर चहारदीवारी में पटक दिया । पहले जहां स्त्रियां समाज और राष्ट्र तक को प्रभावित करने वाले कार्यक्रमों और गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी, उन्हें घरेलू कार्यों में परामर्श देने के अधिकार से भी वंचित कर दिया गया । इससे पूर्व प्राचीनकाल में जहां ऋषिकाएं लोकशिक्षण और समाज का मार्गदर्शन करने में आगे बढ़कर कंधे से कंधा मिलाकर हाथ बंटातीं वहां उसकी स्वयं की शिक्षा अनावश्यक और अनर्थकारी समझी जाने लगी । अतीत साक्षी है इस बात का कि स्त्री न केवल समाज निर्माण के मोर्चे पर कार्य करती थी बल्कि राष्ट्र रक्षा और संस्कृति व धर्म के गौरव की रक्षा के लिए वह युद्ध क्षेत्र तक में जाती थी और कई अवसरों पर तो पुरुष से भी बढ़ चढ़कर साहस का प्रदर्शन करती थी । रामायण में एक युद्ध के अवसर पर कैकेयी द्वारा राजा दशरथ के मोर्चे पर साथ देने तथा संकट की घड़ी में उनके प्राण बचाने की घटना सर्वविदित है । यह भी सभी जानते हैं कि दशरथ ने कैकेयी के इसी शौर्य, साहस से प्रभावित होकर उसे दो वरदान मांगने के लिए कहा था और कैकेयी ने वरदान अपने लिए सुरक्षित रखते हुए राम के राज्याभिषेक के समय मांगे थे ।

हस तरह की ढेरों घटनाएं मिल जाएंगी । परंतु दुर्भाग्य कि पराक्रम और शौर्य के क्षेत्र में भी पीछे न रहने वाली नारी कालान्तर में अपनी आत्म रक्षा के लिए भी असमर्थ हो गई । यह भी हो सकता है कि विदेशी आक्रमणकारियों के अत्याचारों से अपनी कुल मर्यादा की रक्षा और सतीत्व को बचाने के लिए उसे घर के अंदर ही सुरक्षित रखने की बात सोची गई हो, किंतु इस रूप में हमें बड़ी मंहगी कीमत चुकानी पड़ी । तत्काल ऐसा करना भले ही समझदारी की बात रही हो परंतु उसके दूरगामी परिणाम समाज की जीवनी शक्ति को नष्ट करने के रूप में ही सामने आए । इस बात में भी कोई दम नहीं दीखता कि स्त्रियों की सतीत्व रक्षा के लिए उन्हें

प्रतिबंधित किया गया और उनके कार्यक्षेत्र को सीमित बना दिया गया । क्योंकि भारतीय नारियों में उस स्तर का पराक्रम और शौर्य पहले से ही रहा है । उसके साथ छल तो विदेशी आक्रमण से पूर्व ही किया जाने लगा । प्राचीन और दासता के मध्यवर्ती युग में स्त्रियों को मनोरंजन का साधन मानने, उनका क्रय विक्रय होने तथा संपत्ति के रूप में उनकी गणना करने की परिपाटी चल पड़ी थी । उस मध्यवर्ती काल के संबंध में इतिहासकार बताते हैं कि उन दिनों उस व्यक्ति को समाज में उतना ही बड़प्पन और मान मिलता था जिसके पास जितनी अधिक स्त्रियां थीं । स्त्रियों का अपहरण, उनकी लूट और उनके क्रय विक्रय की परंपरा ही इस बात की द्योतक है कि तत्कालीन पुरुष समाज ने मातृशक्ति को सिंहासन से उतारकर किस बर्बरतापूर्वक गंदी नाली में फेंक दिया था ।

प्रकृति कभी किसी को माफ नहीं करती और न ही किसी भूल या त्रुटि को क्षमा करती है । नारी के साथ, मातृ शक्ति के साथ किए गए इस बर्बरतापूर्ण अत्याचार का दुष्परिणाम कालान्तर में ही निकलकर सामने आने लगा । जब स्त्री को संपत्ति ही मान लिया गया, उसे निर्जीव वस्तुओं की श्रेणी में रख दिया गया तो इस तथ्य की ओर किसका ध्यान गया होगा कि वह मां भी है, जननी भी है । इस दृष्टि से उसे गुणवती और सक्षम बनाने की ओर ध्यान भी नहीं ही गया होगा । केवल उसे सजाने, गुड़िया बनाकर अधिकाधिक आकर्षक रूप देने की ओर ही पुरुष का ध्यान केन्द्रित रहा होगा । इस तरह विलासिता के उन्माद में कुचली और वासना के पंक में लथेड़ी गई नारी से श्रेष्ठ संतान, तेजस्वी व्यक्तित्व प्राप्त करने की अपेक्षा कैसे की जा सकती है ।

माना कि उस काल में सभी स्त्रियों को इस तरह की स्थिति का शिकार नहीं होना पड़ा होगा । नारी को रमणी माना गया होगा किंतु मां, बहिन और पूज्य संबंध तब भी रहे होंगे । उनके लिए पुत्र और भाइयों का वैसा ही आदर भाव रहा होगा, परंतु समाज का वातावरण ही तो इस प्रकार का हो गया था जिसमें प्रत्येक स्त्री अपने आपको असुरक्षित और दीन दयनीय स्थिति में फंसी अनुभव करती होगी । सुरक्षा और मर्यादा के

नाम पर घर से बाहर न जाने, विद्यालय में शिक्षा प्राप्त न करने, पुरुषों के बीच न जाने जैसे निषेध और पर्दा करने, पति और पुत्र से ही बात करने तथा घर के अंदर ही सीमित रहने जैसे प्रतिबंध नारी की, मातृशक्ति को कुण्ठित करने लगे । उसका विकास अवरुद्ध हुआ और वह जीवित यंत्र की भांति रहने लगी जिसे तेल और ईंधन दिया जाता रहे तो उपयोग किया जा सके । नर और मनुष्यता की जननी के साथ जड़ वस्तु या मूक पशु की भांति व्यवहार उसके व्यक्तित्व को निर्जीव बनाने लगा और वह संतान को जन्म भर देने के योग्य रह गई । पुरुष को–मनु संतानों के संस्कार कहां से मिलते, कैसे प्राप्त होता उन्हें वह वातावरण जिसमें इतना जीवन उत्पन्न हो सके कि वह संस्कृति का भाल पूर्ववत् उन्नत रख सके । कैसे मिलता समाज को वह बल जिसमें कि वह विदेशी और विधर्मी के प्रति झुकते जा रहे सिर को तानकर खड़ा रख सके ।

उन्हीं घड़ियों में आरंभ हुई वह काल रात्रि जिसका अंधकार डेढ़ हजार वर्ष तक छाया रहा और सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना से शून्य भारतीय केवल अपनी ही चिंता करते हुए, अपने स्वार्थ की पूर्ति ही पर्याप्त समझते हुए मृत प्रायः जीवन जीता रहा । कहा जाता है कि इतिहास किसी के गिरने के बाद एक बार फिर सम्हलने का अवसर देता है । ठोकर खाकर आदमी गिरता है तो दुबारा उठने का मौका मिलता है । सम्हल कर न चलने के कारण ठोकर लगी हो अथवा कमजोरी के कारण कोई गिर पड़ा हो यदि उठने के बाद सम्हल कर नहीं चलता अथवा कमजोरी को नहीं मिटाता तो दुबारा उससे भी भयंकर स्थिति सामने आती है, जिसकी परिणति पुनः गिरने से लेकर मरने तक के रूप में होती है ।

इन दिनों हमारे समाज की स्थिति गिरने के बाद उठने वाले व्यक्ति की तरह है । डेढ़ हजार वर्ष पूर्व हमारे पतन का कारण यही रहा है कि हम संस्कृति की गौरव पताका को थामे रहने वाले समर्थ व्यक्तित्व उत्पन्न करने में असमर्थ हो गए । अपनी नादानियों के कारण हो या गलतियों की वजह से हमने उस आधार को ही तहस नहस करना आरंभ कर दिया था जिस पर कि ऐसे समर्थ व्यक्तित्व उत्पन्न हो सकें । समर्थ और सशक्त

व्यक्तित्वों का उदय आविर्भाव ही हमारे यहां अवरुद्ध हो गया । केवल इसलिए कि हमने मातृशक्ति की अपवंचना आरंभ कर दी, उसे उसके गौरव से वंचित करना शुरू कर दिया ।

इस अपराध का दण्ड लंबे समय तक भुगतने के बाद हमें अवसर मिला है कि हम अपनी भूल को सुधारें और मातृशक्ति के पुनरुत्थान की आवश्यकता समझें । अब तक हमारी प्रवृत्ति जिस भी दिशा में रही है इस ओर उससे निराश ही होना पड़ता है । अपनी भूल को सुधारने के स्थान पर हम उसका कलेवर बदलने की ओर अधिक उन्मुख हैं । पहले नारी को संपत्ति बनाकर कैद किया गया तो अब उसे विभिन्न आकर्षक रूपों में प्रदर्शित करने की भूल कर रहे हैं । उसे जननी, माता, गृहलक्ष्मी और गृह स्वामिनी के रूप में पुनर्प्रतिष्ठित करने के लिए जरा भी प्रयास नहीं किए हैं । उनके प्रति हमारा दृष्टिकोण अब भी नहीं बदला है । कहने को आज की नारी स्वतंत्र है, परंतु आधुनिकता, सभ्यता और प्रगतिशीलता के नाम पर उसे जिस दिशा में धकेला जा रहा है उससे लगता है कि अब नारी को आत्महत्या के लिए तैयार करने के प्रयत्न चल रहे हैं । पहले उसे जबरन बेड़ियों में जकड़ा गया, अब उसे बेड़ियों में गौरव का आभास करा कर उन्हें पहनने के लिए तैयार किया जा रहा है ।

कहा जाता है कि न्यायालय किसी अपराधी को पहली बार अपराध करने पर उदारतापूर्वक विचार करता है और उसी के अनुसार दण्ड देता है । उस दण्ड का उद्देश्य यह रहता है कि व्यक्ति को अपने अपराध का बोध हो और उस दण्ड से सीख लेकर अपने सुधार के लिए यत्न करता रहे । अपराधी इस पर भी अपना सुधार करने के लिए प्रयत्न नहीं करता और दुबारा अपराध कर्मों में प्रवृत्त होता है तो उसे अगली बार कड़ा दण्ड दिया जाता है । पहली बार नारी का अवमूल्यन कर, उसे उसकी गौरव गरिमा से गिराकर हमने एक अपराध किया और इतिहास ने उसका दण्ड अंधेरी काल कोठरी की तरह अंधकार पूर्ण परिस्थितियों में सैकड़ों वर्षों तक रहने का दण्ड दिया । कहा जा सकता है कि वह पहला अपराध था जिसका दण्ड देते समय इतिहास ने उदारतापूर्वक विचार किया । जब भी

यदि हम अपने समाज को इस अवांछनीय कृत्य से विमुख न कर सके तो काल पुरुष हमें कौन सा और कितना कड़ा दण्ड देगा, कुछ कहना संभव नहीं है ।

नारी को घर परिवार का उत्तरदायित्व विशेष रूप से संभालना पड़ता है, यह सही है पर यह गलत है कि उतने ही क्षेत्र में सीमित रहना चाहिए और घर से बाहर के क्षेत्र में कोई रुचि नहीं लेनी चाहिए । घर से बाहर एक कदम भी नहीं रखना चाहिए । ऐसा प्रतिबंध तो ठीक उसी प्रकार का होगा, जिसके आधार पर पुरुष को घर में प्रवेश करने से रोका जाए । जब तक घर में स्त्री का और बाहर पुरुष का कार्य क्षेत्र है और स्त्री को घर तक ही सीमित रहने के लिए कहा जा रहा है तो न्याय की मांग यह है कि पुरुष को भी उसी प्रकार के बंधन स्वीकार करने चाहिए । उसे घर में प्रवेश नहीं करना चाहिए । दुकान, दफ्तर या खेत में ही गुजर करते हुए संतोष करना चाहिए । पुरुष यदि इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते तो अकेली स्त्री को ही उस सीमा बंधन में बांधना किस तर्क एवं न्याय के आधार पर उचित ठहराया जा सकता है ?

विशेष कार्य तो हर किसी के जिम्मे होता है पर वह उतने तक ही सीमित रहने के लिए विवश नहीं किया जाता । पण्डित, लेखक, धोबी, मेहतर, नाई, मोची, चित्रकार, सैनिक, अध्यापक, अफसर, किसान, माली, मजदूर, व्यापारी आदि अपने अपने अलग-अलग प्रकार के काम करते हैं । पर उन पर यह प्रतिबंध नहीं है कि वे उन निर्धारित कार्यों के अतिरिक्त और कुछ कर ही नहीं सकते, जो विशेष कार्य वे करते हैं उन्हें सदा उतने तक ही सीमित रहने, अन्य कुछ भी न करने के लिए वे प्रतिबंधित नहीं हैं, ड्यूटी पूरी करने के उपरान्त वे कुछ भी करते हैं । आवश्यकता एवं इच्छानुरूप अपना काम बदल भी लेते हैं । कितने ही पुरुष रसोई बनाने, बर्तन साफ करने, बच्चे खिलाने जैसे घरेलू कामों की नौकरी करके अपना गुजारा करते हैं, ऐसा कोई नियम नहीं है कि इन्हें यह कह कर उन कामों से रोका जाए कि ये तो स्त्रियों के करने के हैं, पुरुष उन्हें नहीं कर सकते । इसी प्रकार स्त्रियों पर भी यह बंधन नहीं होना

चाहिए कि उन्हें घर के पिंजड़े में ही कैद रहना चाहिए । मुर्गी और कबूतर पालने वाले उनके लिए दरबा बनाते तो हैं पर यह बंधन नहीं लगाते कि निरंतर उन्हें उसी में बंद रहना पड़ेगा । खुली हवा में घूमने का भी उन्हें अवसर देते हैं और विश्वास करते हैं कि वे अपने दरबे को, घर को पहचानते हैं इसलिए उसे छोड़कर सदा के लिए कहीं नहीं चले जाएंगे । अपने घर की स्त्रियों पर यदि मुर्गी या कबूतर जितना विश्वास किया जा सके तो न्याय की रक्षा हो सकती है । आखिर पालतू बिल्ली चौबीस घण्टे कोठे में ही तो कैद नहीं रहती, वह भी मन बहलाने के लिए कहीं इधर उधर जाती और लौट आती है । क्या इतनी सुविधा स्त्रियों को नहीं मिल सकती ?

प्राणी को पिंजड़े में कैद करने पर उसकी प्रकृति प्रदत्त स्फूर्ति क्रमशः नष्ट होती चली जाती है । इसका प्रत्यक्ष परिचय पालतू और अन्य पशुओं को सामने रखकर उनका तुलनात्मक अध्ययन करके जाना जा सकता है । पिंजड़े में पलने वाले और उन्मुक्त आकाश में उड़ने वाले समान आयु और स्वास्थ्य के तोतों को किन्हीं पक्षी विशेषज्ञों के सुपुर्द करके पूछा जाए कि इनकी शारीरिक, मानसिक स्थिति में क्या कुछ अन्तर है ? वे बतायेंगें कि पालतू पशु का शरीर जीर्ण हो गया और मन टूट गया है । यह हारा थका और निराश दिखाई पड़ता है । व्यापक क्षेत्र में पुरुषार्थ करने में जंगली तोतों की नस, नाड़ियों में समर्थता बनी हुई है और आहार एवं सुरक्षा की समस्या पल–पल पर नए ढंग से हल करने के अभ्यास ने उसकी चेतना को प्रखर रखा है । उत्तरदायित्व वहन करने में कुछ असुविधा तो होती है ,पर उसके बदले समान चेतना की अभिवृद्धि का वरदान भी मिलता है ।

बिना चिन्ता के गुजर कर लेना स्त्रियों का सौभाग्य बताया जाता है । उन्हें न तो उपार्जन का परिश्रम करना पड़ता है और न समस्याओं के समाधान में माथापच्ची करनी पड़ती है । इस दृष्टि से वे पुरुष की तुलना में अधिक सुखी कही जाती हैं । पर वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न है । यह तथाकथित निश्चिंतता मानव जीवधारी की मूल प्रकृति से सर्वथा विपरीत

है । यदि ऐसा न होता तो कैदखाने में पूर्ण निश्चिंतता का अवसर होने के कारण कोई कैदी वहां से छुटकारा पाने का इच्छुक न होता । पिंजड़े में बंद रहने वाले तोते, मैना आदि पक्षी दरवाजा खोल देने पर भी उसी में बैठे रहते हैं । चिड़ियाघरों में रहने वाले पशु पक्षी आहार और सुरक्षा की दृष्टि से पूर्ण निश्चिंत होते हैं । उन्हें अपनी आवश्यकताएं जुटाने के लिए कोई दौड़धूप नहीं करनी पड़ती, फिर भी उन्हें मुक्त करने का अवसर देकर देखा जा सकता है कि वे वहां रहना पसंद करते हैं या दरवाजा खुलते ही ताबड़तोड़ भागते हैं । इस छुटकारे में उनके लिए खतरा ही खतरा है । असंख्य चिंताएं और समस्याएं उनके सामने खड़ी होंगी फिर भी 'स्वतंत्रता अपने आप में इतनी बड़ी चीज है जिसके लिए कितना ही बड़ा खतरा उठाया जा सकता है । इस लक्ष्य को पशु पक्षी ही जानते हों, मनुष्य की आत्मा इस तथ्य से अपरिचित हो, ऐसी बात नहीं है । सिखाया, सधाया और कैद करके रखा गया सिंह, सरकस वालों के लिए लाभदायक हो सकता है पर यदि उस प्राणी से पूछा जाय कि आपको इस निश्चिंत और सुविधा संपन्न स्थिति में, वन प्रदेश में रहकर पेट पालने के झंझटों में उलझे जीवन की तुलना में अच्छा लगता है या बुरा ? तो उसका उत्तर कटघरा खोलकर पूछा जा सकता है । वह मूक प्राणी अपनी आंतरिक अभिलाषा का परिचय पिंजड़े से निकल कर कहीं खड़ा होने के रूप में देगा ।'

स्वतंत्रता की आकांक्षा ईश्वर प्रदत्त है । यह आत्मा की भूख है । इसके लिए बड़े से बड़े कष्ट सहे जा सकते हैं । दास दासी, राजा रईसों के यहां पलते, अच्छा खाते और अच्छा पहनते थे, अच्छे मकान में रहते थे । विचारशील लोगों ने दास प्रथा के अंत का आंदोलन चलाया और तब चैन लिया जब वह समाप्त हो गई । स्वतंत्र जीवन जीने वाले दीन दरिद्रों को जिस स्तर का जीवन यापन करना पड़ता है उसकी तुलना में वे दास दासी सुखी थे, फिर मोटी दृष्टि से तो यह स्वतंत्रता उनके लिए हानिकारक ही हुई ? इसी तर्क के अनुसार विदेशी पराधीनता को भी कई सुविधाओं की दृष्टि से उपलब्ध स्वाधीनता की तुलना में अच्छा ठहराया जा

सकता है । उस जमाने में हमें बाह्य आक्रमणों से बचने के लिए सुरक्षा समस्या पर ध्यान नहीं देना पड़ता था । अंग्रेज स्वयं उसकी जिम्मेदारी संभालते थे । ऐसी ही और बातें भी हो सकती हैं । स्वतंत्रता आंदोलन के नेता पराधीनता में रहने के लाभों और स्वाधीनता के कठिन उत्तरदायित्वों को भी जानते थे फिर भी उन्होंने प्राण हथेली पर रखकर स्वतंत्रता संग्राम लड़ा और सारे देश को उसके लिए बड़े से बड़ा त्याग बलिदान करने का आह्वान किया । जिस तर्क के अनुसार स्त्रियों को पराधीनता में सुखी रहने की बात कही जाती है उसी तर्क का प्रयोग करने पर स्वतंत्रता आंदोलन और उसके लिए किया गया त्याग और बलिदान भी निरर्थक ठहराया जा सकता है । इतना ही नहीं छोटे देशों की पराधीनता स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करने के लिए कहा जा सकता है । हर कोई जानता है कि इस प्रकार की वकालत चाहे कितने ही तर्कों और तथ्यों सहित प्रस्तुत की जाए, सदा निन्दनीय ही ठहराई जाएगी और उस प्रतिपादनकर्ता को निहित स्वार्थों का एजेन्ट कहा जाएगा । स्त्रियों को पुरुषों की पराधीनता में ही रहना चाहिए, ऐसा निर्देश करने वाले कोई भी क्यों न हों, मानवी अंतरात्मा की मूलभूत आकांक्षा एवं प्रकृति से अपरिचित ही ठहराए जाएंगे । शास्त्रों की, संतों की, परंपराओं की दुहाई कितना ही गला फाड़कर क्यों न दी जाती रहे, तथ्य अपने स्थान पर अटल बने रहेंगे । दलीलें उन्हें झुठला नहीं सकतीं । नारी दासी है और पुरुष उसका स्वामी यह बात उसी स्थिति में सही हो सकती थी जब नारी मिट्टी या धातु जैसे जड़ पदार्थों की बनी इच्छा, आकांक्षा और चेतना से रहित रही होती । अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि वह पशु स्तर की होती, जिसे मनुष्यों द्वारा बांधा, बेचा और दुहा जोता जाता है । जैसा कि भूतकाल में उसे भोग्या, रमणी, कामिनी आदि के रूप में माना जाता रहा है । यदि उतनी सी ही बात हो तो योरोप की पुरानी मान्यता के अनुसार यह कहा जा सकता है कि 'स्त्रियों में आत्मा नहीं होती, ये पुरुष के उपभोग के लिए बनी हैं, उन्हें स्वतंत्र इच्छा रखने का अधिकार नहीं है ।''

हम फल, शाक, चीनी, साबुन, कपड़े आदि का मनचाहा उपभोग

करते हैं क्योंकि वे भोग्य हैं । स्त्री यदि भोग्या है, उसका जन्म, रसोईदारिन, चौकादारिन और वासना तृप्ति का साधन बनाने के लिए हुआ हो तो वह पुरुष की क्रीत दासी कहला सकती है । उसके स्वामियों को उसे खरीदने, बेचने, दान देने, बांधने और पीटते–पीटते मार डालने अथवा मनचाहा उपयोग करने की छूट मिल सकती है । उसके मालिक जिस भी स्थिति में रखना चाहें बिना उफ किए उसी को शिरोधार्य करने के लिए कहा जा सकता है, किंतु स्थिति इससे भिन्न हो, उसे भोग्या या दासी से ऊंचा माना जाए । प्राणधारी का, मनुष्य का दर्जा दिया जाए तो फिर यह सोचना पड़ेगा कि उसका भी अपना कुछ चेतनात्मक अस्तित्व है और उसके साथ जुड़ी हुई स्वतंत्रता की आकांक्षा के लिए भी कोई स्थान है ।

मनुष्य के भीतर बैठा हुआ असुर सदा से दुर्बलों का शोषण करने के लिए लालायित रहा है और उसने जब अवसर पाया है, अपनी घात चलाई है । जो पशु उसकी पकड़ में आ गए अब उनका त्राण कठिन दीखता है । समर्थों ने दुर्बलों को दास बनाया और उनसे लगभग पशुओं जैसा व्यवहार किया । नारी की प्रजनन विशेषता के कारण उसे शारीरिक दृष्टि से दुर्बल पाया और उसे भी शोषण का एक सामान बना लिया । यह प्रवृत्ति पूंजीवाद, उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद, अधिनायकवाद, सामंतवाद, पुरोहितवाद आदि के रूप में अभी भी प्रकट और प्रच्छन्न रूप से ढंग और कलेवर बदलती और सिर उठाती देखी जा सकती है । तर्कों के आधार पर इन सभी अवांछनीयताओं को उचित एवं आवश्यक सिद्ध करने का भी प्रयत्न होता रहता है । समर्थ, दुर्बलों का शोषण करें, इसलिए 'उपयोगितावाद' का एक स्वतंत्र दर्शन है । ''सरवाइवल ऑफ दि फिटेस्ट'' की उक्ति को समर्थ से लेकर दुर्बल तक अपने अपने ढंग से चरितार्थ करते दिखाई पड़ते हैं । सत्ताधारी, दुर्बलों को चूसते हैं ।दुर्बल व्यक्ति घर की नारियों को पददलित बनाने में नहीं चूकते । वे नारियां भी जब सास बनती हैं तो अपनी पुत्र वधुओं के साथ उसी तरह का व्यवहार करती हैं । वे पुत्र भी अपने बच्चों को मारने पीटने में कोताही नहीं करते । यह कुचक्र असुरता की

प्रतिच्छाया में ही चलता है । मानवता को पैरों तले कुचल कर ही ये दुष्प्रवृत्तियां जीवित रहतीं और फलती फूलती हैं । समूचे नारी समाज को आज इसी आसुरी शोषण का शिकार रहना पड़ रहा है । जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है नारी को घर के क्षेत्र में, पुरुष के अधिनायकत्व में मौत के दिन पूरे करना ।

न्याय, औचित्य और स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले मानवी आदर्श को मान्यता देने वाले उदात्त लोगों की पंक्ति में हमें खड़ा होना चाहिए और इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि नारी घर के उत्तरदायित्व को सम्भाले, पर उतने ही क्षेत्र में कैद न रहे । उसके ऊपर लगे पर्दा प्रतिबंध शिथिल होने चाहिए और उसे विश्वसनीय माना जाना चाहिए । अनुभव बढ़ाने का, समाज का स्वरूप समझने का अवसर मिलना चाहिए । शिक्षा प्राप्त करने के लिए, बाजार से सौदा खरीदने के लिए, अन्य आवश्यक काम निपटाने के लिए, घर के पुरुषों का हाथ बंटाने के लिए, लोकमंगल प्रयोजनों के लिए घर से बाहर जाने का अवसर देना चाहिए । इससे मानव जाति की आधी शक्ति की मूर्छित आत्मा को जगाने का पथ प्रशस्त होगा और समूची मानव जाति को इस प्रगतिशील कदम का लाभ मिलेगा ।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)